चन्दामामा
जनवरी १९६५
GDP

जनवरी १९६५

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ६० पैसे   वार्षिक चन्दा रु. ७-२०

अपने बच्चे को सर्दी-ज़ुकाम से पीड़ित न होनें दें
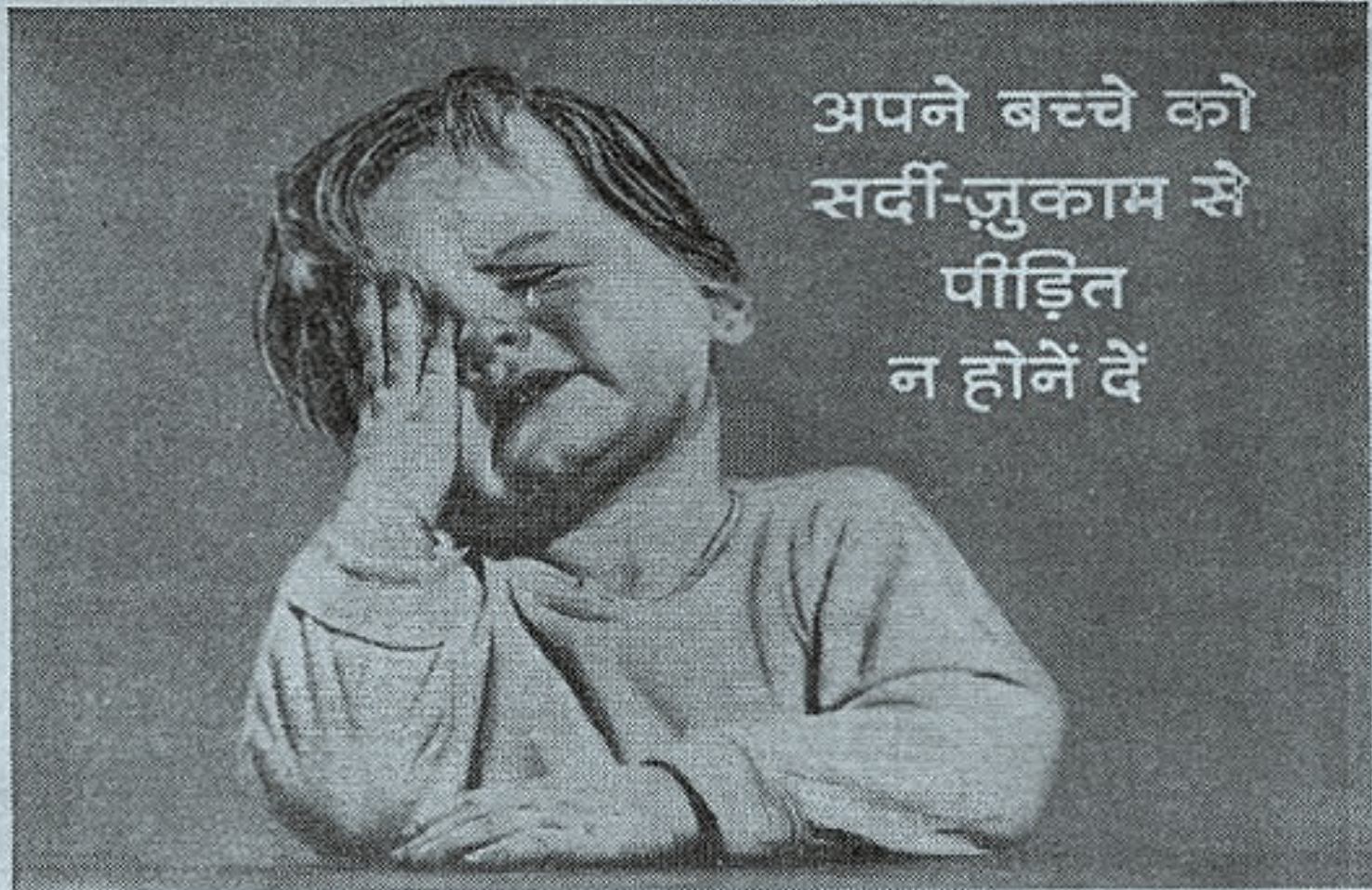
विक्स वेपोरब तुरन्त आराम पहुंचाता है...
आपका बच्चा आसानी से सांस ले सकता है...वह रात भर आराम से सो सकता है।

आपके बच्चे की सुख-सुविधा आप पर ही निर्भर है। इस लिए जब आपके बच्चे में सर्दी-ज़ुकाम के आरम्भिक लक्षण दिखायी दें, जैसे नाक का बहना, आंखों से पानी गिरना, गले का बैठ जाना, सांस लेने में तकलीफ, तो विक्स वेपोरब मलिये।

विक्स वेपोरब आपके बच्चे के सर्दी-ज़ुकाम का सर्वोत्तम इलाज है क्योंकि यह सर्दी से प्रभावित उन सभी भागोंपर, जैसे नाक, छाती और गले में, जहां सर्दी की पीड़ा सबसे ज्यादा होती है, असर करता है और आपके बच्चे की कोमल त्वचा को इससे तनिक भी क्षति नहीं पहुंचती।

बस विक्स वेपोरब मलिये और अपने बच्चे को कम्बल ओढ़ा कर आराम से बिस्तरपर सुला दीजिये। विक्स वेपोरब अपना काम करता रहेगा। जबकि आपका बच्चा रात भर चैन की नींद सोता रहेगा। सुबह तक सर्दी-ज़ुकाम की पीड़ा जाती रहेगी और आपका लाडला मुन्ना स्वस्थ और हँसता-खेलता उठेगा।

विक्स वेपोरब ३ साइज़ में

VV 464.

घर की शांति के लिये

प्रत्येक बालक शैतान होता है

प्लास्टिक्ले की रचनात्मक क्रिया दीजिये

बालक खेल रहा है - घर में चैन है

नुसैकोस प्लास्टिक्ले

बच्चों के रचनात्मक विकास के लिये

बच्चों के लिये एक खिलौने बनाने का अद्भुत रंग-बिरंगा मसाला जो बस १ धाम में लाया जा सकता है। १२ आकर्षक रंगों में प्रत्येक खिलौने वाले व पुस्तक विक्रेता से प्राप्त करें।

नर्सरी स्कूल व होम इक्वीप्मेंट कम्पनी
पोस्ट बाक्स १४१८ देहली-६

आप कौन-सा चाहते हैं?

पेक एन्ड फोल्ड

पेक एन्ड फोल्ड ड्राई लन्च बोक्स सब जगह, अनेक रंगों में खरीदा जा सकता है।
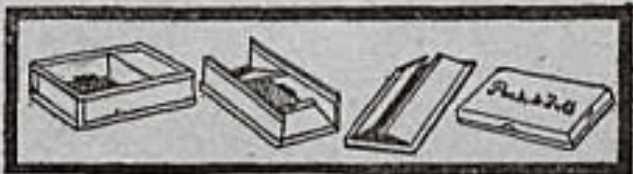
वेगोट एन्टरप्राइजेज़
२, क्रोस लेन, विक्टोरिया रोड,
दोतीवाला इस्टेट, बाईकुला, बम्बई - २७.

बच्चों के लिए अनुपम मौज एवरेस्ट टाईनी टोट

चपल बच्चों को अपनी पसंद की खाने या पीने की सामग्री, ठंडी या गरम, स्कूल ले जाने के लिए बनाया हुआ "टाईनी टोट" एवरेस्ट वेक्युम फ्लास्क की सभी वैशिष्ठ्य एवं सामग्री से युक्त है।

अपने बच्चों के लिए खास बना हुआ "टाईनी टोट" क्या आप उसे नहीं दिलाएंगे? उनकी अनूठी प्रतिभा के विकास में गौरवपूर्ण "टाईनी टोट" विशेष सहयोग देगा। आज के बच्चे कल के नागरिक हैं।

विक्टरी फ्लास्क कम्पनी प्रा० लि०

बम्बई ★ कलकत्ता ★ दिल्ली ★ मद्रास

Vapi-6/63

सारे परिवार के स्वास्थ्य के लिये फॉसफोमिन

फॉसफोमिन विटामिन बी काम्प्लेक्स तथा मस्तिष्क ग्लिसरोफासफेट से युक्त एक उत्कृष्ट टॉनिक है जो आपके परिवारको बलवान सुख और स्वस्थ रखेगा। फॉसफोमिन के सेवनसे थकावट और कमजोरी का नामोनिशान नहीं रहेगा। फॉसफोमिन थकावटको मिटाता है। भूक बढाता है। आन्तरिक बल बढाता है। शरीर को बलवान बनाता है। हर फल के स्वादवाले विटामिन टॉनिक...फॉसफोमिन से आपके सारे परिवारका स्वास्थ बना रहेगा।

सीखने में देर क्या सबेर क्या!

एक तितली एक नन्ही बालिका को खूबसूरती और रंगों की सराहना करना सिखाती है। वह जीवन की कीमत उसके क्षुद्रतम और मृदुतम रूपों में भी करना सीख जाती है।

आप अपने बच्चों को अब दूसरा सबक सिखाइये कि दांतो व मसूड़ों की रक्षा कैसे करनी चाहिये जिससे वे बड़े होकर आपका आभार मानेंगे कि सड़े गले दांत व मसूड़ों की बीमारियों से आपने उन्हे बचा लिया।

आज ही अपने बच्चों में सबसे अच्छी आदत डालें — उन्हे दांतो व मसूड़ों की सेहत के लिये फोरहन्स टूथपेस्ट इस्तेमाल करना सिखायें। एक दांत के डाक्टर द्वारा निकाला गया फोरहन्स टूथपेस्ट संसार में एक ही है जिसमें मसूड़ों की रक्षा के लिये डा. फोरहन्स द्वारा निकाली गई विशेष चीजें हैं। इनके हमेशा इस्तेमाल से दांत सफेद चमकने लगते हैं और मसूड़े मजबूत होते हैं। "CARE OF THE TEETH AND GUMS", नामक रंगीन पुस्तिका (अंग्रेजी) की मुफ्त प्रति के लिये डाक-खर्च के १० पैसे के टिकट इस पते पर भेजें: मॅनर्स डेन्टल एडवायजरी ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१

चन्दामामा
संचालक : चक्रपाणी
हम "चन्दामामा" में कई मास से भारत का इतिहास दे रहे हैं। इतिहास के बहुत-से लाभ हैं। पर सबसे बड़ा लाभ यह है कि इतिहास के महापुरुषों से किशोर अपना पथ प्रदर्शन कर सकते हैं। इसके अलावा हम प्रायः जीवनियाँ भी देते रहे हैं। अब भी नेहरू जी की जीवनी दी जा रही है।
हमें आशा है कि हमारे पाठक इसका पूरा फायदा उठा रहे होंगे।
वर्ष : १६ जनवरी १९६५ अंक : ५

भारत का इतिहास

पानीपत के पास और गोआ के पास यद्यपि अफ़गान हरा दिये गये थे तो भी वे पूरी तरह दबे न थे। उपयुक्त नेता के मिलने पर वे मुगलों का मुक़ाबला करने के लिए तैय्यारियाँ कर रहे थे।

शेरखान सूर में उनको उचित नेता भी मिल गया। उसके नेतृत्व में कुछ समय तक अफ़गानों ने मुगलों का आधिपत्य नष्ट भी कर दिया, फिर अपना अधिकार स्थापित किया।

शेरखान सूर की कहानी बाबर और अकबर की जीवनियों से कम नहीं है। उसने फरीद नाम से एक मामूली आदमी की तरह जिन्दगी शुरु की। कष्ट उठाकर अपनी मेहनत से तरक्की करता आया। वह सूर वर्ग का अफ़गान था।

उसका बाबा इब्राहीम, अपने लड़के हसन को साथ लेकर पेशावर से पूर्व की ओर आया और बाज्वर परगणा में सैनिक वृत्ति करता बस गया। वहीं १४७२ में फरीद का जन्म हुआ होगा।

कुछ दिनों बाद इब्राहीम दिल्ली जिला में काम करने लगा। उसके लड़के हसन ने जौनपुर के गवर्नर से एक जागीर पायी। हसन की और भी पत्नियाँ थीं। चूँकि फरीद के पिता को, उसकी सौतेली माँ ने अपने रौब में रख रखा या, वह २२ वर्ष की उम्र में घर छोड़कर जौनपुर गया, तब से उसके जीवन में संघर्ष प्रारम्भ हुआ।

वह महावीर भी कहलाया, वह मेहनत करके पढ़ा। फ़ारसी भाषा और उसके साहित्य में वह पारंगत भी हो गया।

हसन के मालिक जमालखान फरीद को देखकर बड़ा खुश हुआ। उसने पिता पुत्र में सन्धि करवायी, ससराम और खवसपूर के परगणों का, फरीद को परिपालक नियुक्त किया। तब वे परगणे बिहार राजा के आधीन थे। शासन में उसकी दक्षता देख उसकी सौतेली माँ सह न सकी। इस कारण फरीद फिर एक बार अपने पिता को छोड़कर चला गया।

हसन के मरते ही उसकी जागीर फरीद को मिली। उसको अपने आधीन करने के लिए उसने जरूरी फरमान आगरा से पा लिया था। १५२२ में उसने बिहार राजा के यहाँ नौकरी की और ख़ूब सफल रहा। उसने एक बार अकेले एक शेर को मारा। इसलिए राजा ने उसको शेरखान का खिताब दिया। यही नहीं बिहार के सुल्तान (बहर खान लोहानी) शेर खान को अपना वकील और अपने छोटे लड़के जलाल खान का अध्यापक भी नियुक्त किया।

पर अभी शेर खान के अच्छे दिन नहीं आये थे। उसके शत्रुओं ने सुल्तान के मन में सन्देह पैदा कर दिये। वह अपनी पिता की जागीर भी खो बैठा, बाबर की सेना में भरती हो गया। १५२७ जून से १५२८ जून तक उसमें उसने काम किया। युद्ध में क्योंकि उसने सहायता की थी, इसलिए बाबर ने उसकी जागीर फिर उसे वापिस दे दी।

उसने मुगलों की नौकरी छोड़ दी, बिहार आया और अपने पहिले शिष्य जलालखान के संरक्षक के रूप में रहने लगा। वह छोटा था और नाम मात्र के लिए राजा था। सारा अधिकार शेरखान के हाथ में था। चार साल में उसने सेना का अधिकाँश भाग अपनी ओर कर

लिया और पूर्ण रूप से स्वतन्त्र शासक हो गया।

जुनार का मालक ताज़कान अपनी छोटी पत्नी लादमालिक पर मुग्ध था, यह देख, उसके बड़े लड़के ने उसकी हत्या कर दी। परन्तु विधवा लदमालिक ने शेरखान से विवाह कर लिया और चुनार का किला उसे सौंप दिया। १५३१ में हुमायूँ के विरुद्ध अफ़गानों ने विद्रोह किया। तब तक उस विद्रोह से शेरखान का कोई सम्बन्ध न था। हुमायूँ ने चुनार के किले को घेरा। शेरखान ने घुटने टेक कर आत्म रक्षा की।

यह देख कि शेरखान का दबदबा बढ़ता जा रहा था। लोहानी अफ़गान, जलालखान भी उसको खतम करने के लिए कोशिश करने लगे। शेरखान ने उनकी दाल न गलने दी। १५३३ में सितम्बर में बंगाल के नवाब मुहम्मद शा की मदद माँगी। सुरज गर के पास शेरखान ने बंगाल के नवाब और लोहानियों को हराया। यह विजय शेरखान के जीवन में एक सीढ़ी के समान थी।

हुमायूँ जब गुजरात के सुल्तान बहादुर शा पर हमला कर रहा था, तब शेरखान यकायक बंगाल की राजधानी गौर में प्रत्यक्ष हुआ। बंगाल का नवाब मुहम्मद शा कमज़ोर था। उसने १२ लाख सोने के सिक्के और तीन हज़ार वर्ग मील की भूमि हरजाने के तौर पर देकर उससे सन्धि कर ली। इस तरह शेर का बल और प्रतिष्ठा बढ़ गई। गुजरात का शासक बहादुर शा जब भाग गया, तो कई अफ़गान सरदार शेरखान की तरफ़ आ गये।

नेहरू की कथा

[६]

जवाहर लंडन में दो वर्ष रहे। खूब पैसा खर्च किया, मज़े में रहे। जितना रुपया घर से पिता भेजते, उतना वे खर्च कर देते।

मोतीलाल नेहरू को डर था कि उनका लड़का "बिगड़ रहा है" परन्तु जवाहर बिगड़े नहीं। कुछ दिन, उन्होंने ब्रिटिश धनिकों का अनुकरण करके देखा, पर जल्दी ही वे उस जीवन से ऊब उठे।

केम्ब्रिज की शिक्षा के बाद जवाहर एक आपत्ति से बचे। वे एक बार नोरवे गये। वे और उनके साथी टहलने के बाद अपने होटल में पहुँच गये। होटल में नहाने की व्यवस्था न थी। अंगोछा आदि, लेकर, नेहरू एक अंग्रेज़ युवक के साथ पास के पहाड़ी नाले में नहाने गये। जब वे पानी में उतर रहे थे, तो उनका पैर फिसल गया। बर्फीले पानी में उनका शरीर जम-सा गया। उनके हाथ पैर हिले नहीं। वे तेज़ धारा में बह पड़े। उनके साथ के अंग्रेज़ युवक ने किनारे किनारे भागते उनको जैसे तसे रोक लिया और बाहर निकाल दिया।

तब जवाहर को मालूम हुआ कि वे कैसी आपत्ति से बचे थे। जहाँ उनका पैर फिसला था वहाँ से एक फर्लान्ग नीचे एक जलप्रपात था। वह इतना ऊँचा था, कि आपत्ति की भयंकरता का वे सहज अनुमान कर सके।

जवाहरलाल ने इन्लेण्ड में कुल मिलाकर सात साल बिताये। १९१२

के अन्त में वे अपने देश आ गये। देश में राजनैतिक आन्दोलन उदारवादियों के हाथ था। उग्रवादियों के नेता तिलक जेल में "गीता रहस्य" लिख रहे थे।
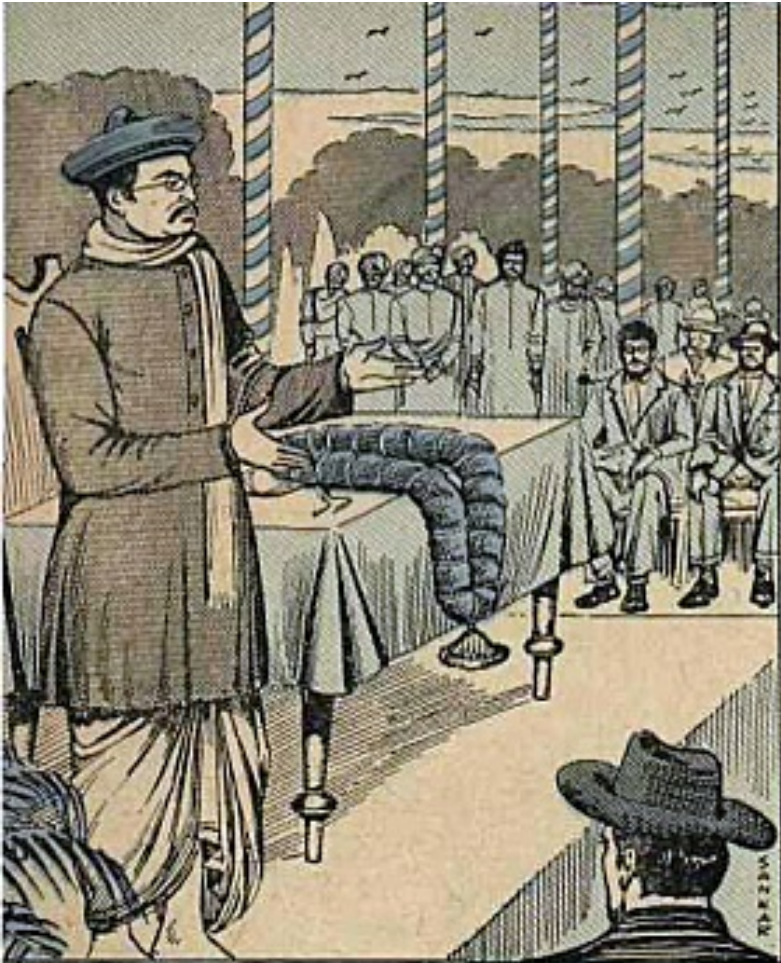
विहार प्रान्त में, बाँकीपुर में, १९१२ के क्रिस्मस में कान्ग्रेस का अधिवेशन हुआ। उसमें जवाहर डेलिगेट बनकर गये। उस कोन्ग्रेस का वातावरण देखकर वे चकित-से रह गये। अधिवेशन में भाग लेनेवाले सब अंग्रेज़ी दाँ उच्च वर्ग के लोग थे। अधिवेशन राजनैतिक सभा न होकर कोई सोशल समारोह-सा लगता था। उनमें गोखले बहुत ही उच्च जान पड़ते थे। गोखले उदारवादी थे, पर उनकी राजनैतिक व नागरिक समस्याओं पर सहानुभूति ने जवाहर को बहुत प्रभावित किया।

जवाहर ने हाईकोर्ट में प्रेक्टीस शुरु की। कुछ दिन तो उनको वकालत भायी, फिर वे उससे ऊब उठे।

सच कहा जाये, तो जवाहर उस वृत्ति के योग्य न थे। जब वे और वकीलों को देखते, उनकी बात सुनते, तो उनको वह सब अच्छा न लगता।

जैसी राजनीति वे चाहते थे, वैसी उन दिनों देश में न थी। उनकी दृष्टि में राजनीति का अर्थ था, लोगों में एक चेतना का आना, विदेशी सरकार से संघर्ष करना, सामना करना।

कान्ग्रेस बिल्कुल निर्जीव थी। फिर भी वे कान्ग्रेस में शामिल हो गये और जब कभी कोई समस्या आती, तो उसके हल करने में सोत्साह लग जाते। उन्होंने शिकार में भी कुछ आनन्द

पाना चाहा। पर उसमें भी उनको खास शौक न था—जंगल जाने में तो उनको मज़ा आता, पर जन्तु जानवरों को मारने में मज़ा न आता। काश्मीर में उन्होंने एक भालू को मारा भी। एक बार, एक हरिण चोट खाकर, उनके पैरों के पास आ गिरा। आँसू बहाता, बड़ी आँखें करके उनकी ओर देखने लगा। जवाहर उन आँखों को न भूल सके। उन्होंने शिकार ही छोड़ दिया।

१९०५ में गोखले ने पूना में सर्वेन्टस आफ इन्डिया सोसाइटी स्थापित की। उसके सदस्यों को शपथ लेनी पड़ती थी कि वे निर्धन रहकर देश की सेवा करेंगे। उस संस्था के उद्देश्यों ने जवाहर को आकर्षित तो किया, पर वे उनके सदस्य न हुए।

उसी समय पहिली बार जवाहर ने गान्धी जी के बारे में सुना। १९१३ नवम्बर में गान्धी जी ने दक्षिण अफ्रीका में २,५०० भारतीयों से सत्याग्रह करवाकर बड़ी विजय पायी थी। इस नयी पद्धति ने जिसमें बेपढ़, गरीब, पीड़ित, शोषित, विजय पा सकते थे, जवाहर को बड़ा प्रभावित किया। उनको हर तरह की चेतना पसन्द थी।
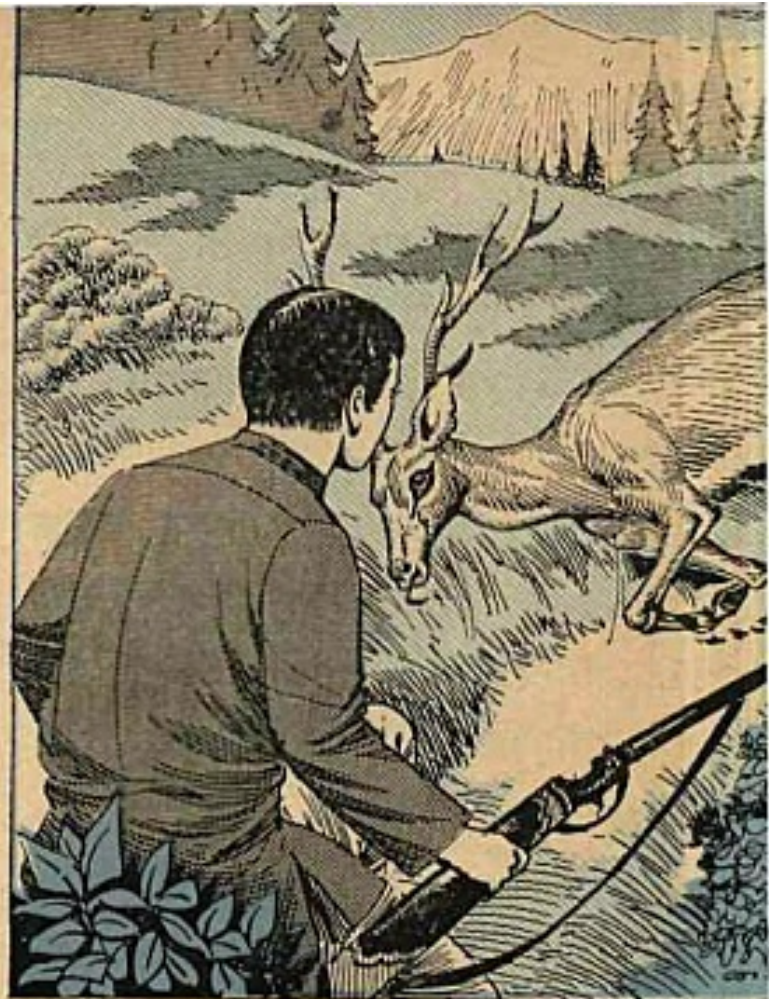
प्रथम महायुद्ध के पूर्व इटली ने टर्की पर आक्रमण किया और उसके कुछ हिस्से हथिया लिये। बल्कान युद्ध शुरु हुए। उसमें ग्रीस, बल्गेरिया, सर्बिया आदि देशों ने टर्की पर हमला किया।

टर्की चूँकि मुस्लिम देश था, इसलिए सब पश्चिम देश उसके विरुद्ध थे। अतः भारतीयों की सहानुभूति टर्की से थी। यही नहीं, भारत के मुसलमानों का खलीफा टर्की का सुल्तान था। जो घायल टर्की

सैनिकों की चिकित्सा करने के लिए गये थे उनमें राष्ट्रवादी डा. एम. ए. अन्सारी भी थे। १९०५ उनसे पहिली बार जवाहर मिले थे।

अगस्त १९१४ में, प्रथम युद्ध प्रारम्भ हुआ। वह चूँकि और जगह चल रहा था, इसलिए उसकी "आँच" भारत तक नहीं आयी थी। राजनैतिक चेतना एकदम दब-सी गई थी।

यद्यपि सब ऊपर से ब्रिटेन की विजय चाहते थे, पर अन्दर ही अन्दर उदारवादी भी जर्मनी से सहानुभूति रखते थे। उनको जमनी से कोई प्रेम न था—वे भारत को आधीन रखनेवाले ब्रिटेन की पराजय पर सन्तुष्ट होना चाहते थे। जर्मनी की विजय चाहने का एक और कारण यह भी था कि टर्की जर्मनी के साथ था।

युद्ध के दूसरे वर्ष में यह सुना गया कि भारत में षड़यन्त्र हो रहे थे—गोलियाँ छोड़ी जा रही थीं।

ब्रिटिश कर्मचारी ज़ोर जबर्दस्ती से रंगरूट भरती कर रहे थे। दस लाख भारतीय युद्ध कार्य में नियुक्त किये गये। देश रक्षा के विधान के अनुसार सच्ची खबरें दबायी जातीं, इसलिए इधर उधर की खबरें उड़ने लगीं।

इस वातावरण में राष्ट्रीय भावनायें फिर उठने लगीं। १७ जून १९१४ में तिलक जेल से छोड़े गये। इसके एक साल बाद "गीता रहस्य" छपा और हाथों हाथ बिकने लगा। गीता में राजनैतिक चेतना के आधार स्वरूप, कर्मयोग का तिलक ने प्रतिपादन किया था।

[७]

[किले में जिस पठान योद्धा ने प्रवेश किया था, वह कतलू खान का सेनापति उस्मान खान था। विमला जब जगतसिंह को तिलोत्तमा के कमरे में पहुँचाकर ऊपर गई, तो उसने उससे तालियाँ ले लीं। उसे पकड़ लिया। उसे एक सैनिक को सौंपकर गुप्त द्वार से उसने कुछ पठानों को किले में प्रवेश करवाया। विमला उस सिपाही की, जो उस पर पहरा दे रहा था, आँखों में धूल झोंककर चली गई।]

शत्रुओं के किले में घुसने के बारे में वीरेन्द्रसिंह को बताना, क्योंकि पहिला कर्तव्य था इसलिए विमला उसके शयनागार की ओर भागने लगी। रास्ते में उसको "अल्ला हो अकबर" का हल्ला सुनाई दिया। यह पठानों की विजय ध्वनि थी।

धीमे धीमे किले में हो हल्ला बढ़ने लगा। जो सो रहे थे, वे सब उठ-से गये थे। वह घबराती घबराती वीरेन्द्रसिंह के कमरे की ओर गई। वहाँ भी शोर था।

पठान सैनिक किवाड़ तोड़कर अन्दर घुसे। वीरेन्द्रसिंह हाथ में तलवार लेकर पागल की तरह घुमा रहा था। उसका सारा शरीर खून से लोथ पोथ था। आखिर उसका लड़ना बेकार गया। एक पठान

श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

की चोट लगी कि वीरेन्द्रसिंह की तलवार नीचे जा गिरी। वह पठानों के हाथ कैदी बना लिया गया।

विमला यह सब अपनी आँखों देख हताश हो गई। "अभी कुछ नहीं हुआ है। तिलोत्तमा की रक्षा की जा सकती है" सोचकर, वह तिलोत्तमा के कमरे की ओर भागी। पर वह उसके कमरे तक पहुँच न सकी। सब जगह पठान लड़ रहे थे। किले पर हमला कर रहे थे।

किला, लगता था जैसे पठानों के वश में आ गया हो। यह सोच कि बिना पठानों के हाथ में पड़े तिलोत्तमा के कमरे तक पहुँचना असम्भव था। वह वापिस मुड़ी। वह न जान सकी कि कैसे तिलोत्तमा और जगतसिंह के पास यह ख़बर पहुँचाई जाये।

यही सोचती वह एक कमरे में बैठ गई। इतने में उसे लगा कि पठान एक एक कमरे को छानते छानते उसके कमरे के पास भी आ रहे थे। उनसे बचने का कोई रास्ता न था, इसलिए वह सन्दूक के पीछे छुप गई।

सैनिक उस कमरे में घुसे और वहाँ रखी चीज़ें इकट्ठा करने लगे। जब वे सन्दूक खोलने आयेंगे, तो उसे अवश्य देखेंगे। फिर भी विमला ने हिम्मत न हारी, वह सन्दूक के पीछे से, जो कुछ पठान करते जाते थे, देखती जाती थी। जब पठान चीज़ें देखकर फूला न समाते थे, विमला खिसक गई।

वह कमरे से बाहर आयी थी कि नहीं कि किसी ने पीछे से उसका हाथ पकड़ लिया। जब पीछे मुड़कर देखा, तो उसने रहीम शेख को पाया।

"अब कैसे छुड़ाकर जाओगी?" रहीम ने पूछा।

विमला ने एक क्षण सोचकर कहा—"बात न कर, मुख बन्द करके मेरे साथ आ।" कहती रहीम का हाथ पकड़कर बाहर ले गई। रहीम उसकी बात सुनकर उसके साथ चला गया।

विमला ने उसको एकान्त स्थल में ले जाकर कहा—"छी....छी....मैंने कभी न सोचा था कि तुम यूँ करोगे। मुझे अकेली ऊपर छोड़कर कहाँ चले गये थे? तुम्हारे लिए मैं सारा किला खोजती रही।" उसने कहते कहते शेख पर नज़र जो फेरी तो शेख देखता रह गया।

"मैं क्या करूँ? सेनापति को बहुत खोजा। फिर जब ऊपर पहुँचा तो तुम न थी।" रहीम शेख ने कहा।

"जब तुम काफी देर तक न आये, तो यह सोचकर कि तुम कहीं भूल न गये हो, मैं तुम्हें खोजती निकली। गनीमत है कि तुम दिखाई पड़ गये। अब देरी न करो। किला हाथ में आ गया है, चलो, दोनों भाग निकलें।" विमला ने कहा।

"आज नहीं, कल सवेरे चलेंगे। मालिक से कहे बिना कैसे चला जाये...." रहीम ने कहा।

"....तो चलें अभी से रुपया पैसा, गहने वहने सब बाँध बूँधकर रख लो। नहीं तो कोई सिपाही उन्हें उठा ले जायेगा।" विमला ने कहा।

"तो चलो...."

विमला का ख्याल था कि कम से कम वह उसको और सिपाहियों के हाथ नहीं पड़ने देगा। जैसा उसने सोचा था कई सैनिक उसको दिखाई दिये, पर रहीम

को साथ देख उन्होंने कुछ न कहा, कई ने रहीम के भाग्य की बहुत सराहना भी की।

विमला रहीम को एक कमरे में ले गई। वहाँ कितने ही सन्दूक, तरह तरह की कीमती चीज़ें थीं।

"इससे ऊपर का कमरा ही मेरे सोने का कमरा है। यहाँ तुम जो चाहो ले लो, मैं ऊपर जाकर अपनी चीज़ें लेकर आती हूँ। ठीक है न?" विमला ने उसकी ओर तालियाँ फेंकते हुए कहा।

कमरे में चीज़ों को देखकर रहीम की आँखें चौंधियाँ गईं। वह सन्दूक टटोलने में लग गया। उसे यह शक भी न हुआ कि विमला उसे ठग रही थी। उसने बाहर जाकर ताला लगा दिया। रहीम अन्दर कैद हो गया।

विमला, तिलोत्तमा के कमरे की ओर भागी। वह किले के एक कोने में था। उसके नीचे ही नदी बहती थी। तब तक सिपाही उस तरफ़ नहीं गये थे। शायद तिलोत्तमा को किले का शोर-शराबा भी नहीं सुनाई दिया था।

विमला यकायक तिलोत्तमा के कमरे में नहीं घुसी। उसने किवाड़ में से अन्दर देखा। तिलोत्तमा पलंग पर बैठी थी। जगतसिंह बग़ल में खड़ा उसके मुँह की ओर देख रहा था। तिलोत्तमा की आँखों से आँसू बह रहे थे और जगतसिंह उन्हें पोंछ रहा था। विमला जान गई कि वे विदा के आँसू थे। वह अन्दर आ रही थी कि जगतसिंह ने पूछा—"बाहर यह शोर क्या है?"

"पठानों का जय जयकार। वे कभी भी यहाँ आ सकते हैं। आप जल्द ही कोई रास्ता सोचिये।" विमला ने कहा।

"वीरेन्द्रसिंह कहाँ है?"

"शत्रुओं के हाथ आ गया है।"

यह सुनते ही तिलोत्तमा ज़ोर से हँसी और बेहोश नीचे गिर गई। जगतसिंह का मुँह फीका पड़ गया। उसने विमला से कहा—"तुम ज़रा तिलोत्तमा की ख़बर लो।"

विमला तिलोत्तमा के मुँह पर गुलाब जल छिड़क कर, पंखा झलने लगी। पठानों का शोर, कहीं पास में ही सुनाई पड़ रहा था। विमला ने रुँधी हुई आवाज़ में कहा—"आ रहे हैं? आ रहे हैं? न मालूम क्या हो? युवराज। क्या होगा?"

जगतसिंह ने आँखें लाल करते हुए कहा—"अकेला हूँ। क्या किया जा सकता है? तुम्हारी सहेली की रक्षा के लिए मैं अपनी जान तक न्योछावर कर दूँगा।" शत्रुओं का कोलाहल, तल्वार, कटार का शोर बहुत समीप सुनाई पड़ने लगा। विमला ने ज़ोर से कहा—"तिलोत्तमा! ऐसे बुरे समय तुम बेहोश हो गई हो, कैसे तुम्हारी रक्षा की जाये?"

तिलोत्तमा ने आँखें खोलीं।

"युवराज, तिलोत्तमा के होश आ गये हैं।" विमला ने कहा।
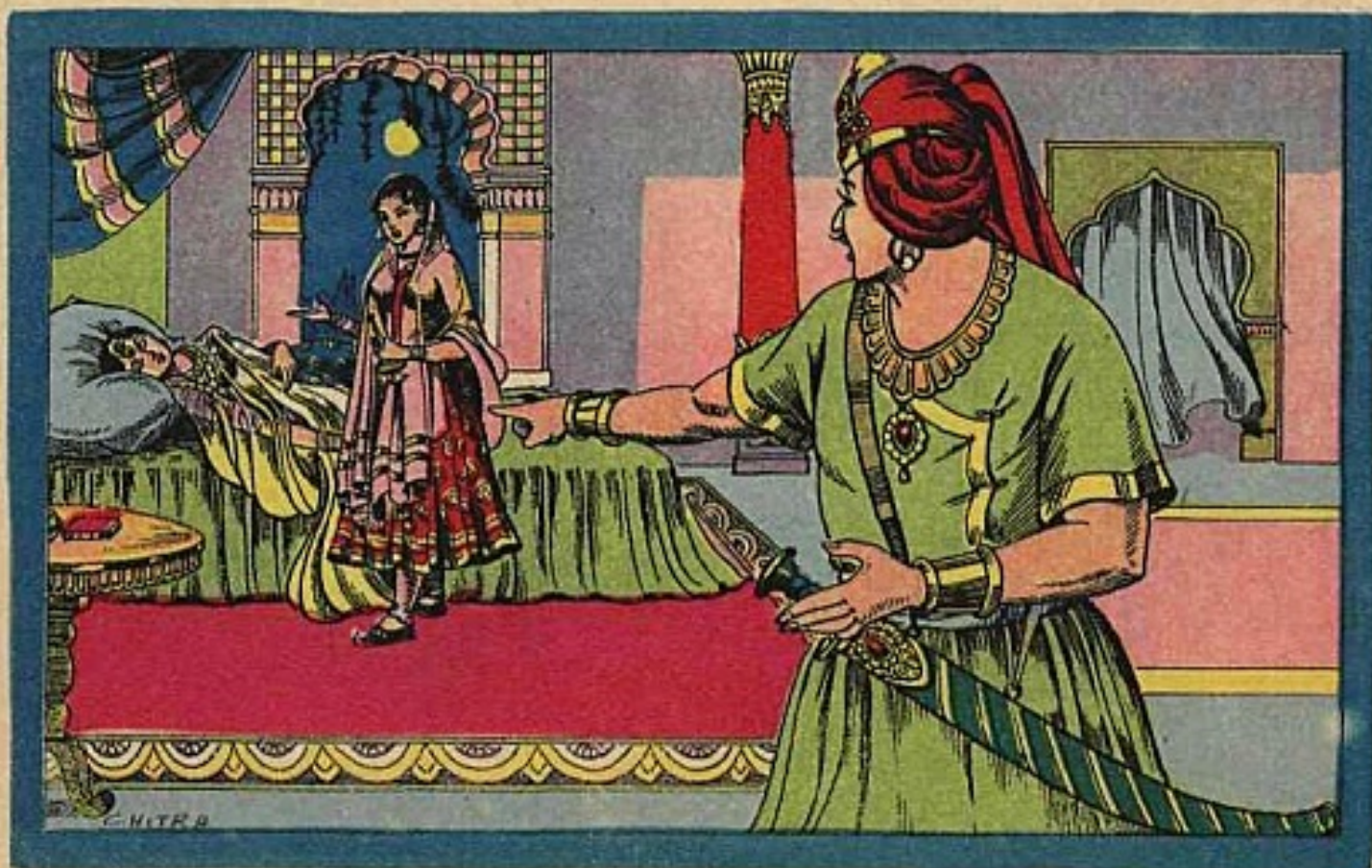
"जब तक वह इस घर में है, उसकी कोई रक्षा नहीं कर सकता। तिलोत्तमा में अगर बाहर जाने की शक्ति होती, तो मैं तुम्हें बाहर पहुँचा देता। पर उसमें उतनी शक्ति नहीं है। शत्रु आ रहे हैं। विमला मैं अपने प्राण दे सकता हूँ, पर मुझे अफसोस है मैं तिलोत्तमा की रक्षा नहीं कर सकता।" जगतसिंह ने कहा।

विमला ने तिलोत्तमा को उठा लिया। "तो चलिये, मैं भी तिलोत्तमा के साथ आपके पीछे आती हूँ।" विमला ने कहा। वे जब कमरे में से बाहर निकले, तो पठान सैनिक दिखाई दिये। वे "अल्लाह हो अकबर" चिल्लाये। वे जगतसिंह पर तुरत ज़ोर से लपके।

जगतसिंह ने अपनी तलवार एक सैनिक की छाती पर घुसेड़ी। वह सिपाही ज़ोर से चिल्लाया और नीचे गिर गया। वह अभी तलवार उसकी छाती में से निकाल ही रहा था कि किसी ने जगतसिंह की गरदन का निशाना बनाकर एक भाला छोड़ा। जगतसिंह झट मुड़ा, उस भाले को पकड़कर, उसने उसे फेंकनेवाले सिपाही पर इतनी ज़ोर से फेंका कि वह वहीं ठंडा हो गया।
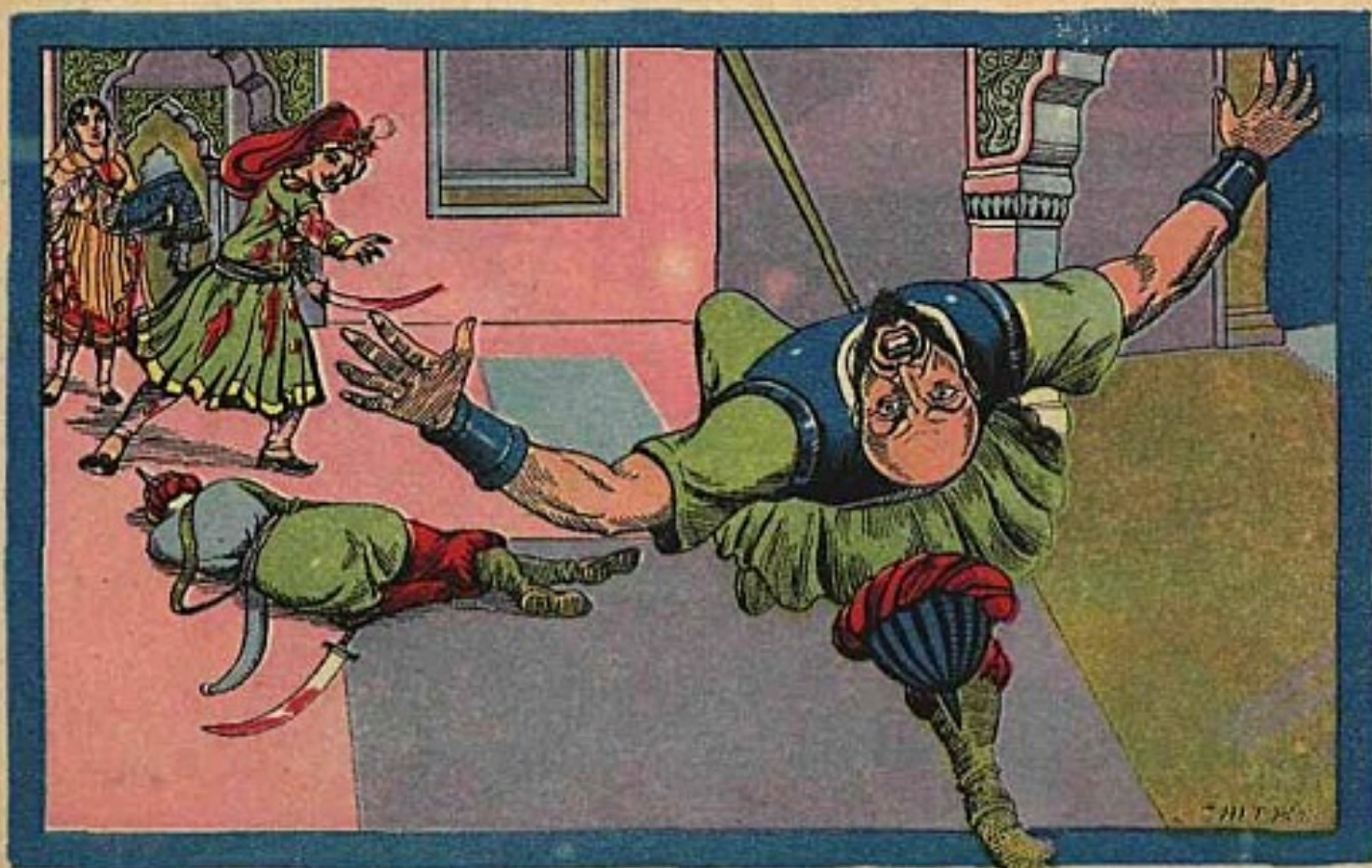
बाकी दोनों पठानों ने एक साथ अपनी तलवारें उस पर फेंकीं।

उसने एक तलवार को अपनी तलवार से तोड़ दिया। परन्तु दूसरी उसके कन्धे पर लगी और वहाँ घाव लग गया। चोट लगते ही वह घायल शेर की तरह हो गया, उसने घायल करनेवाले को तुरत मार दिया।

इस बीच एक घायल पठान ने उस पर एक कटार फेंकी। वह जगतसिंह की छाती पर लगी। पर उसे वह सूई की तरह भी न चुभी। जब उसने सिपाही की पीठ पर लात मारी, तो वह दूर जा गिरा। जगतसिंह ने जब उसका गला काट देना चाहा, तो "अल्ला हो, अकबर" चिल्लाते, कई पठान वहाँ आ गये।

वह जान गया कि अब लड़ना जान से हाथ धोना था। उसके सारे शरीर पर खून बह रहा था।

तिलोत्तमा, अभी विमला के हाथों पर थी। विमला रो रही थी। जगतसिंह के खून से उसकी साड़ी भी भीग गई थी।

सारे कमरे में पठान सिपाही मर गये। जगतसिंह ने तलवार नीचे रखी, लम्बी साँस लेकर, वह कुछ कुछ लड़खड़ाया। एक साथ इतना खून चला गया था कि उसकी आँखें मुँद रही थीं।

उसी समय एक सिपाही ने कहा—"अ अरे, निकम्मे! तलवार नीचे फेंक, तेरी जान हम नहीं लेंगे।"

यह सुनते ही जगतसिंह गरमा उठा। उसने तलवार की एक चोट से, जिसने यह कहा था, उसकी गरदन काट दी। उसके ऊपर पैर रखकर, वह गरजा—"अब देखो, राजपूत कैसे प्राण छोड़ता है।"

फिर सिपाहियों ने तलवारें घुमायीं। जगतसिंह जान गया कि वह अकेला नहीं लड़ सकता था। उसने, जहाँ तक सम्भव था, उतने पठान मारकर, जान छोड़नी चाही। बेहोश गिरते-गिरते, उसने यों सुना।

"खबरदार, राजकुमार की जान न निकालो। शेर को मर्यादापूर्वक पकड़कर, पिंजड़े में रखना होगा।" उस्मान खान ने कहा।

उस्मान खान और उसके एक सिपाही ने जगतसिंह को एक ऊँची पलंग पर लिटाया। भाग्य का ऐसा खेल कि जगतसिंह की प्रियतमा की शैय्या, शायद उसकी मरण शैय्या बन रही थी।

उस्मान खान को, कमरे में दोनों स्त्रियाँ नहीं दिखाई दीं। "वे स्त्रियाँ कहाँ गई?" उसने पूछा।

हुआ यह कि जब उसने दुबारा तलवारों का युद्ध देखा, तो वह ताड़ गई कि क्या होने जा रहा था। वह तिलोत्तमा को लेकर, एक बड़े सन्दूक के पीछे छुप गई। इससे अच्छा कोई और उपाय उसे न सूझा।

उस्मान खान ने उन्हें न देखा, उसने अपने सैनिकों से कहा—"देखो, वे कहाँ हैं। सारा किला देख डालो। दासी बड़ी चतुर है। उसे बचकर न जाने दो, उससे हम पर खतरा आ सकता है। बीरेन्द्रसिंह की लड़की पर कोई अत्याचार न हो, होशियार रहो।"

उसी समय सन्दूक के ऊपर झाँककर देखा। "वे यहीं हैं, हुजूर।"

उस्मान खान का मुँह खिल गया। "बाहर आ जाओ—कोई डर नहीं है।" उसने कहा। [अभी है]
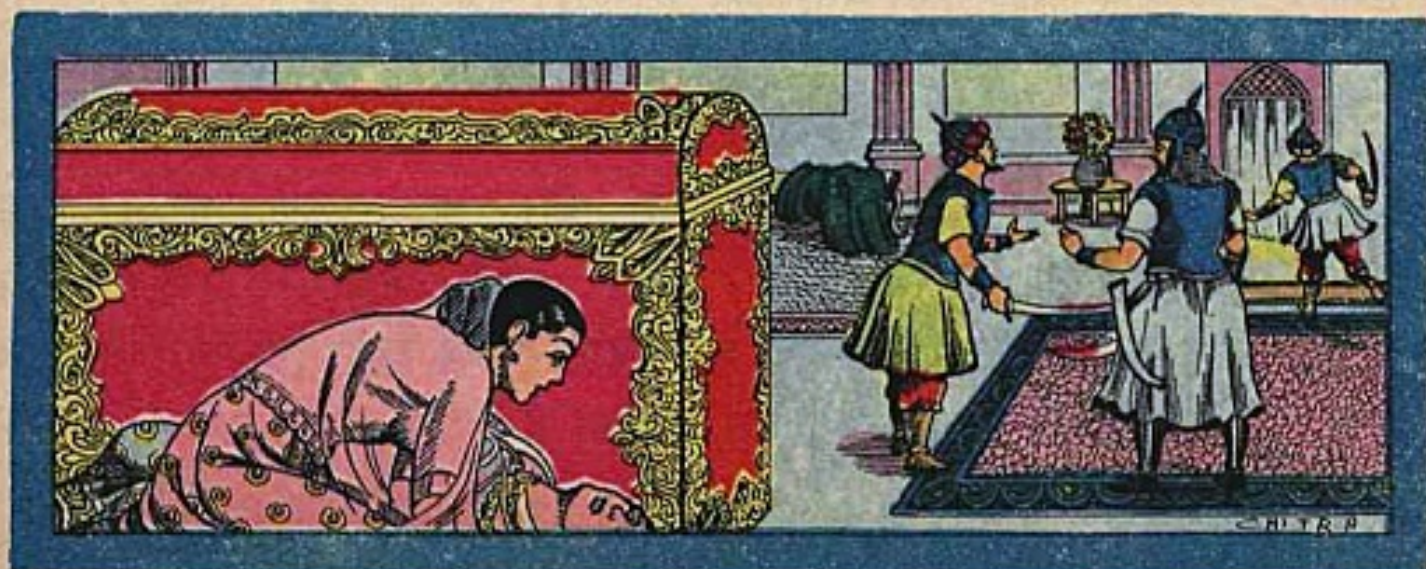
क्रुध्द देवी

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया। शव उतारकर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, मैं नहीं जानता कि तुम किन देवताओं को सन्तुष्ट करने के लिए, इस आधी रात के समय यों कष्ट उठा रहे हो, पर मैं यह जानता हूँ कि मनुष्यों के लिए देवताओं को सन्तुष्ट करना सम्भव नहीं है। कई बार तो वे मनुष्यों की भक्ति पर भी गुस्सा हो उठते हैं। इसके दृष्टान्त रूप में मैं तुम्हें मल्ल मोची की कहानी सुनाता हूँ।" वह यों सुनाने लगा।

एक बार यम के किंकर, एक पापी को काँटों पर चलाकर, हाथ पैर बाँधकर, तपते रेत के टीले पर छोड़कर चले गये और वह पापी दर्द के कारण चिल्ला रहा था तब

बेताल कथाएँ

आकाश मार्ग में जाती एक देवी ने उसका रोना सुना। उसे उस पर तरस आया। वह उसके पास आयी। उसके पैरों के काँटे निकाल दिये। उसकी दर्द कुछ कम करके वह अपने रास्ते स्वर्ग चली गई।

चूँकि नरक में, उसने एक पापी के पैर छू लिये थे, इसलिए हाथ की अंगुलियों को नरक का मल लग गया था। बहुत कोशिश करने पर भी वह न गया। उसके छुपे हुए मल के बारे में और देवियों को भी मालूम हो गया। आखिर यह बात देवेन्द्र तक पहुँची।

देवेन्द्र ने उसे बुलाया, उसकी अंगुलियों को देखा। "नरक की यह मलिनता, कैसे लगी?" उसने पूछा। जो कुछ हुआ था, उसने बता दिया।

यह सुनकर देवेन्द्र ने कहा—"तुम देवी हो, तुम्हारा नरक जाना ही गलती है। वहाँ, जब एक पापी दण्ड भुगत रहा था, उसके दण्ड में दखल देना और भी बड़ी गलती है। जब तक नरक का मल नहीं चला जाता, तब तक तुम भूलोक में जाकर मोची का काम करके, चप्पल बनाओ।"

देवी ने इन्द्र से प्रार्थना की कि शीघ्रातिशीघ्र वह मलिनता हटे?

"जब तुम हज़ार जोड़ी चप्पल बना लोगी, तब वह मलिनता स्वयं चली जायेगी!" देवेन्द्र ने कहा।

देवी भू लोक चली आयी। वह एक मोची के पास गई। रात में उसने कई जोड़े चप्पल सी साकर, सवेरे तक तैय्यार कर दिये।

वह मोची बड़ा भक्त था। इसलिए ही उसने उसे चुना था। परन्तु वह बड़ा गरीब था। उसकी सी हुई चप्पलें भी सुन्दर न होती थीं। रईसों के लिए चप्पल

बनाना उसे आता न था। देवी ने उसको बड़ी सुन्दर चप्पलें सीकर दी थीं।

अगले दिन जब उसने चप्पल देखीं, तो उसे ही अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ। वह यह भी न जानता था कि उन्हें किसने सिया था, कैसे वे वहाँ आ गई थीं। परन्तु सी वे उसे चमड़े से गई थीं, जिसे उसने तैय्यार कर रखा था। वह उन चप्पलों के बेचने शहर में गया। वे जल्द ही बिक गईं। पैसे भी अच्छे मिल गये। उसमें से उसने कुछ तो अपने पास रख लिये, बाकी से अच्छा चमड़ा खरीदकर वह घर आ गया।

उस दिन रात को, देवी ने उसके लाये हुए चमड़े से कई सुन्दर चप्पलें बनाईं।

मोची जान गया कि कोई देवी उसकी सहायता कर रही थी। वह प्रति रोज अधिक धन कमाने लगा। बड़ी बड़ी रकम लगाकर, वह चमड़ा खरीदने लगा। चाहे वह जितना भी चमड़ा खरीदता, अगले दिन उस सब की सुन्दर चप्पलें बनकर तैयार हो जातीं।

थोड़े दिनों में वह सुख से रहने लगा। उसकी चप्पलों के लिए अच्छी माँग होने लगी, अच्छे दाम भी मिलने लगे। जो

देवी उसकी मदद कर रही थी, उसके लिए उसमें भक्ति भी उमड़ने लगी। उस देवी के लिए वह रात के समय, पूजा द्रव्य, चन्दन, पुष्प, ताम्बूल, धूप आदि लाता, दीपाराधना करता।

चप्पल तो रोज की तरह बन रहे थे, पर जो कुछ पूजा द्रव्य उसने समर्पित किये थे, उनमें से उसने एक को भी न छुआ। देवता के लिए उसने फल आदि नैवेद्य रखे। उसको भी देवी ने न छुआ। एक दिन उसने नया कपड़ा खरीदकर, ताम्बूल के साथ देवी को समर्पित किया। देवता न छुआ। एक दिन उसने तश्तरी में कुछ रुपये रखे। अगले दिन उसने देखा कि जो रुपये उसने तश्तरी में रखे थे, वे वैसे के वैसे ही थे।

मोची ने उस देवी की प्रार्थना की—"हे देवी, मैं आपकी वजह से कितना ही फायदा पा रहा हूँ। उसकी कृतज्ञता के रूप में जो कुछ मैं समर्पित करता हूँ, क्यों नहीं कुछ लेती हो? यदि तुमको मुझ पर दया न होती, तो क्या तुम मेरे लिए रोज चप्पल सीती? मैं, जो कुछ भक्ति से दे रहा हूँ, उसमें से फल या पुष्प तो कम से

कम स्वीकार करो। मुझे आनन्दित करो। तब तक मेरे मनको शान्ति न मिलेगी।" कहकर, वह रोज देवी की पूजा करने लगा।

मोची जो कुछ कर रहा था, वह देवी देखती आ रही थी। उसकी श्रद्धा भक्ति पर, वह मन ही मन हँसी भी। पर जब उसने पूजा प्रार्थना शुरु की, तो वह, वह सब न देख सकी। उसने सोचा था कि दो-तीन दिन पूजा पाठ कर वह स्वयं थक थका जायेगा। परन्तु रोज़, उसकी पूजा बढ़ती जाती थी। उसकी पूजा से देवी भी खिझने ऊबने लगी।

उससे तंग आकर, वह एक धनी मोची के घर जा बसी। उसके हाथ का मैल, बहुत कुछ जा चुका था। दो-चार सौ जोड़ी चप्पलें ही सीने को बाकी रह गई थीं। इस दूसरे मोची के यहाँ चमड़े के ढ़ेर के ढ़ेर थे। एक दिन रात को देवी ने उस सब चमड़े के चप्पल बना दिये। नरक का मल हटा करके, स्वर्ग चली गई।

इधर पहिला मोची जान गया कि देवी उसको छोड़कर चली गई थी। उसके खरीदे चमड़े की चप्पलें बननी बन्द हो गई। देवी उस पर क्रुद्ध हो गई थी।

वह न जानता था कि उसके कारण क्या गलती हुई थी, वह दुखी रहने लगा। उसने दुःख में चारपाई पकड़ी और कुछ समय बाद मर गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। गरीब था, पर चूँकि वह धार्मिक था, इसी कारण तो देवी पहिले मोची पर सन्तुष्ट हुई थी? अच्छे लोगों में भक्ति का होना स्वाभाविक है? भक्तों की इच्छा पूरा करना देवी देवताओं के लिए भी स्वाभाविक है। उस हालत में क्या कारण था कि देवी ने उसके द्वारा समर्पित नैवेद्य, पूजा, पुष्प, उपहार न छुये? उसने क्यों उसको यों दुःखी किया। यदि इन सन्देहों का तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"देवी, मोची पर दया करने या उसकी मदद करने, या लाभ पहुँचाने के लिए नहीं आयी थी, वह तो अपनी मलिनता हटाने के लिए आयी थी। यदि उसकी सी हुई चप्पलों से पहिले मोची का लाभ होता था, तो उसे कोई आपत्ति न थी। परन्तु मोची अपनी मूर्खतावश देवी का ही प्रत्युपकार करने लगा। उसकी दी हुई वस्तुओं को यदि वह छूती, तो उसे भय था कि नरक की मलिनता भले ही चली जाती, पर भूलोक की मलिनता लग जाती। इसी कारण देवी ने मोची की इच्छा पूरी नहीं की।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। [कल्पित]

परीक्षा

देश के ग्रामाधिकारियों के पास राजा के यहाँ से एक आदेश आया। आदेश यह था कि प्रत्येक ग्रामाधिकारी अपने अपने गाँव के मुख्य व्यक्तियों के, उनके नाम आदि, विवरण, राजा के पास भेजें। ग्राम में रहनेवाले पंडित, कवि, गायक, शिल्पी और वीरों के नाम उस सूची में शामिल किये जा सकते थे।

राजा का आदेश लेकर, दरबार से एक कर्मचारी, हरेक गाँव में घूमता, पन्नालाल के गाँव में भी ग्रामाधिकारी से मिलने आया। ग्रामाधिकारी ने अपने गाँव के एक कवि, एक शिल्पी, एक गायक और दो वीरों के नाम सूची में लिखे। अन्त में छटे स्थान पर उसने परोपकारी पन्नालाल का नाम भी लिखवाया। कर्मचारी जब सूची लेकर चला गया। एक सप्ताह बाद, ग्रामाधिकारी के पास राजा के कार्यालय से आदेश आया। आदेशानुसार ग्रामाधिकारी से आवश्यक निरूपण पत्र लेकर, आगामी नवमी के दुपहर को राजमहल जाना था।

ग्रामाधिकारी ने उन व्यक्तियों को बुलवाया। उन्हें राजा का आदेश सुना कर कहा—"ऐसा मालूम होता है कि आप सब का राजा आदर करने जा रहे हैं।"

"वे सब तो किसी न किसी क्षेत्र में मुख्य हैं, आप मुझे क्यों जाने के लिए कहते हैं? मैं तो किसी भी क्षेत्र में प्रवीण नहीं हूँ। शायद मेरे कारण ग्राम की ही अप्रतिष्ठा हो।" पन्नालाल ने कहा।

"ऐसा कुछ नहीं होगा। राजा ने सब कुछ मालूम करके ही तुम्हें बुला भेजा

है। निमन्त्रण का स्वीकार न करना, राजा का तिरस्कार करने के बराबर होगा। जाओ।" ग्रामाधिकारी ने कहा। पन्नालाल को मानना पड़ा।

ग्राम से राजधानी तक चार दिन का रास्ता था। पड़ाव करते, नवमी के प्रातःकाल, राजधानी के समीप के एक गाँव में पहुँचे। यदि कोई विघ्न न हो, तो वे राजा के पास दुपहर तक पहुँच सकते थे। उनके कुछ दूर जाने पर एक नहर आयी। नहर पार करने के लिए एक ताड़ का तना डाल रखा था। जब वे वहाँ पहुँचे, तो एक बुढ़िया और तीन बच्चे वहाँ थे। वे उस पर से जा नहीं पा रहे थे।

उन छहों को वहाँ आया देख, बुढ़िया ने कहा—"बाबू, मुझे और इन बच्चों को उस पार लगा दो। ताड़ पर जाने के लिए डर लग रहा है और नहर गहरी है।"

पन्नालाल के साथ के लोगों ने कहा—"पीछे से कोई आयेगा और तुम्हें पार लगा देगा। हमें ज़रा जल्दी जाना है।" कहकर, एक के बाद एक ताड़ पर से नहर पार कर गये। पन्नालाल ही इस तरफ़ रह गया। उसने उनसे कहा—"मैं, तुमको और बच्चों को पार ले जाऊँगा।"

कुछ देर सोचने के बाद पन्नालाल को लगा कि वह उतना आसान काम न था। बुढ़िया बहुत बूढ़ी थी और बच्चे बहुत छोटे थे। उस ताड़ पर से उस बूढ़ी को और बच्चों को हाथ पकड़कर ले जाना, बहुत मुश्किल था।

बीच में वे उसे भी पानी में घसीट सकते थे। इसलिए उसने ताड़ के साथ पकड़ने के लिए रस्सी बाँधने का निश्चय किया। उसके एक-दो के पार ले जाने से

क्या फायदा था। यदि रस्सी का इन्तज़ाम कर दिया गया, तो हर कोई उस ताड़ पर से, उसे पकड़कर जा सकता था। यह सोचकर, पन्नालाल ने अपनी पोटली किनारे पर रखी, वहाँ गाड़ने के लिए एक लम्बा बाँस खोजने लगा।

तब उस तरफ़ गये हुए पाँचों आदमियों ने पूछा—"क्यों पन्नालाल, क्यों नहीं आते हो? वहाँ अभी क्या कर रहे हो? समय हो रहा है?"

"तुम चलते जाओ, मैं तुमसे आ मिलूँगा।" पन्नालाल ने कहा।

"यह तो हमेशा ही ऐसा है, हमारे साथ इतनी दूर आया है—यह आश्चर्य की बात है।" यह कहकर, वे जल्दी-जल्दी भागे चले गये।

नहर के पास ही पड़े हुए छः छः फीट लम्बे दो बाँस ढूँढ़ निकाले। नहर के दो किनारे बाँस ज़ोर से गाड़ दिये। वह बढ़ की लम्बी जड़ें लाया और उसने उन दोनों बाँसों के बीच उसे बाँध दिया। अब डरपोक से डरपोक आदमी उसके सहारे ताड़ पर से उस पार जा सकता था।

"मैं भी वहीं जा रहा हूँ। सब मिल कर जा सकते हैं।" पन्नालाल ने कहा।

परन्तु वे तेज़ न चल सके। सबसे छोटे लड़के ने कहा—"मेरे पैर में दर्द हो रहा है। मैं नहीं चल सकता।" बुढ़िया उसे उठाकर, बिल्कुल न चल सकी। इसलिए पन्नालाल उसे उठाकर स्वयं चलने लगा।

पन्नालाल जब महल में पहुँचा, तो दुपहर ढ़ल चुकी थी। वह बुढ़िया और बच्चों को अतिथिशाला के पास छोड़कर उस द्वार पर आया, जिसके द्वारा अतिथि आ जा रहे थे।

क्योंकि हाथ में कुछ औजार वगैरह, न थे, इसलिए यह काम पूरा करने के लिए दो-तीन घंटे लग गये। बुढ़िया और उसके पोते नहर के पार चले गये।

"भला हो तुम्हारा, अब हम आराम से राजमहल पहुँच जायेंगे।" बुढ़िया ने कहा।

"आप राजा के यहाँ जा रहे हैं?" पन्नालाल ने आश्चर्य में पूछा।

"हाँ, हाँ, राजा का जन्म दिवस है। गरीबों को भोजन दिया जायेगा। उसके लिए ही मैं अपने पोतों के साथ जा रही हूँ।" बुढ़िया ने कहा।

उसके साथ जो पाँच आये थे, वे यद्यपि दुपहर से पहिले पहुँच गये थे, पर अभी तक उनको प्रवेश नहीं मिला था, वे बाहर ही थे। मन्त्री ने पूछताछ की। जब उसे मालूम हो गया कि वे फलाने गाँव से आ रहे थे, तो उसने पूछा—"इस सूची के अनुसार तो तुम छः हो, छटा कहाँ है?"

"रास्ते में वह इधर उधर के काम करता पीछे रह गया है।" उसने कहा।

"उसे भी आने दीजिए। सब तब अन्दर जा सकते हैं।" मन्त्री ने कहा।

जब पन्नालाल उनको दिखाई दिया, तो सब उसी की ओर गये। "तुम्हारे कारण ही हमें बाहर रोक दिया गया है। हमारे बाद, जो आये थे, वे भी अन्दर चले गये हैं। तुम हमारे गाँव की अप्रतिष्ठा कर रहे हो...."

"इसीलिए तो मैंने कहा था कि मैं नहीं आऊँगा।" पन्नालाल ने कहा।

छहों मिलकर मन्त्री के पास गये। मन्त्री ने उनके निरूपण पत्र देखे, फिर पूछा कि वे क्यों देरी से आये थे।

"हुज़ूर, गलती मेरी है। ये पाँचों समय पर आ गये थे। यहाँ से मील भर की दूरी पर, एक नहर पर सहारे के लिए रस्सी बाँधते हुए देरी हो गई।" कहकर पन्नालाल ने बताया कि कैसे बूढ़े और बच्चों को ताड़ पर से जाने में असुविधा होती थी। उसने बुढ़िया और उसके पोतों के बारे में भी मन्त्री से कहा।

"क्या, अब पुल ठीक है?" मन्त्री ने पूछा।

"जी, छोटे बच्चे भी अब उसे पार कर सकते हैं।" पन्नालाल ने कहा।

"उसकी मरम्मत के लिए कितना समय व्यर्थ हुआ?" मन्त्री ने प्रश्न किया।

"हमें आये हुए तीन घंटे हो गये हैं।" बाकी पाँचों ने कहा।

"अब दुपहर के ढ़ले एक घंटा हो गया है। आप पाँच लोग हैं। यदि आप सब भी उसकी मदद करते, तो सब दुपहर से पहिले ही पहुँच जाते।" मन्त्री ने कहा।

किसी ने कोई जवाब नहीं दिया।

"तो तुम पहिले जाकर भोजन करो।" मन्त्री ने कहा।

राजा के जन्म दिवस के सम्बन्ध में तीन दिन दरबार लगा। भिन्न भिन्न ग्रामों से आये हुए विशिष्ट व्यक्तियों की, उन उनकी विद्याओं में परीक्षा ली गई और तदनुसार उनको ईनाम दिये गये।

पन्नालाल को डर लगा कि उसकी परीक्षा ली जायेगी और उसको नीचा देखा जायेगा। पर उसकी परीक्षा नहीं ली गई। अन्तिम दिन परीक्षायें समाप्त हुईं। एक एक का नाम लेकर, ईनाम दिये जाने लगे। पन्नालाल की परीक्षा नहीं हुई थी, इसलिए उसके साथ आये हुए लोगों ने सोचा कि उसको कोई ईनाम नहीं मिलेगा। परन्तु राजा ने पन्नालाल को भी ईनाम के लिए बुलाया।

"इनका नाम पन्नालाल है। ये परोपकारी हैं। इनकी परीक्षा नहीं ली गई है, चूँकि रास्ते में आते आते ही इनकी परीक्षा हो गई थी। बिना प्रतिफल की आशा किये, अपनी हानि के होते हुए भी, मानवों का उपकार करनेवाले पन्नालाल को दस हज़ार सोने की मुहरें ईनाम में दी जाती हैं।" राजा ने भरी सभा में कहा।

उपयुक्त गुरु

भार्गव नाम का एक ग्रामाधिकारी था, उसके बहुत दिनों बाद एक ही एक लड़का हुआ, जिसका नाम दीपक था। पिता चाहता था कि उसका लड़का खूब पढ़े लिखे और कई विद्याओं में प्रवीण हो। पर भार्गव के सामने समस्या यह थी कि कहाँ समर्थ गुरु पाया जाये।

दीपक बड़ा चुस्त था। बुद्धिमान था। कोई बात अगर एक बार सुनता, तो समझ जाता। कई प्रश्न ऐसे करता, जो उसकी उम्र के लोग नहीं करते थे। उनके उत्तर न पिता दे पाता, न कोई और ही, इतने बुद्धिमान लड़के को कोई सामान्य गुरु शिक्षा नहीं दे सकता था। इसलिए ही भार्गव को उपयुक्त गुरु खोजना पड़ रहा था। उसके गाँव में ही एक गुरुकुल था, पर वहाँ उसके लड़के की बुद्धि बढ़नेवाली न थी।

वहाँ से दो तीन कोस दूरी पर, शिलापीठ नामक ग्राम में, कर्मठीय नामक वृद्ध का एक गुरुकुल था। उनके सब शिष्य प्रतिभाशाली होकर, प्रसिद्ध हो रहे थे, ऐसा सुना जाता था, परन्तु भार्गव को सन्देह था।

अगर वह इतना बड़ा गुरु है, तो गाँव में क्यों रहेगा? उस जैसे के भरण-पोषण के लिए, गाँववाले कितना कुछ जमा करके दे सकते हैं? अगर वह सचमुच बड़ा है, तो क्या नगर में जाकर अधिक नहीं कमा सकता? खैर, यदि लड़के को ले जाकर, नगर के शिक्षणालय में भरती किया गया, तो कैसे उससे दूर रहा जाये?

फिर भी लोगों की बात की परवाह न करना भी अच्छा न था। एक बार स्वयं देख आने में भी कुछ न जाता था। इसलिए भार्गव एक दिन अच्छा मुहूर्त देखकर, कुछ भेंट उपहार लेकर, लड़के को साथ लेकर, निकल पड़ा।

प्रसिद्ध कर्मठीय गरीब था, उसने सोचा, देखें कैसे वह अतिथिसत्कार करता है, यह सोच अन्धेरे के समय वह गुरुकुल पहुँचा।

भार्गव जब पहुँचा, तो कर्मठीय पास के तालाब में स्नान करने गया हुआ था। घर में उसकी पत्नी और बच्चों ने उसका अच्छी तरह आदर सत्कार किया।

भार्गव ने स्वयं तालाब जाना चाहा। गुरु का बड़ा लड़का और छः साल का पोता, उसको तालाब ले गये। जब वे पहुँचे, तो कर्मठीय अपने कपड़े धो रहा था, उसे देख भार्गव ने नमस्कार किया।

कुशल प्रश्न के बाद भार्गव ने पूछा—"गुरोत्तम मुख्य दो रंगों में दूसरा क्या अधिक मुख्य है?"

"दोनों ही मुख्य हैं। यह न हो, तो वह नहीं है, वह नहीं है, तो यह नहीं है।" गुरु ने जवाब दिया।

पास ही गुरु के पोते को देखकर भार्गव ने उससे पूछा—"क्यों बेटा, तुम्हें हमारी बातें समझ में आईं?"

इस पर बच्चे ने पूछा—"क्यों नहीं समझ में आयीं? क्या दिन की अपेक्षा, रात ही आपके लिए मुख्य है? यह आपने हमारे बाबा से पूछा। बाबा ने बताया कि दोनों ही मुख्य हैं।"

फिर भार्गव ने पूछा—"जब पूरे बारह हैं, तो आप जैसे वृद्ध क्यों छटे में कष्ट उठा रहे हैं?"

इस पर कर्मठीय ने कहा—"मेरे पैदा होने के बाद, मरकर फिर जीनेवाली बत्तीस पीढ़ियाँ हैं, इसीलिए ही।"

इस का मतलब क्या था, भार्गव ने इस बार गुरु के लड़के से पूछा। उसने यह कहा—"आपने हमारे पिता जी से पूछा" वार्धक्य में क्यों आप शिशिर ऋतु की ठंड में कष्ट उठा रहे है? इस पर मेरे पिता जी ने कहा—"मेरे दान्त सब ठीक हैं और भोजन पचाने में मदद कर रहे हैं। इसलिए ही मैं यह ठंड सह लेता हूँ।"

भार्गव ने फिर कर्मठीय से पूछा—"कितने ऐसे हैं जो घर बनाते तोड़ते रहते हैं?"

इस पर गुरु ने कहा—"ऐसा काम करके छोड़नेवाले चार हैं। अब उनकी ओर के लोग ये काम कर रहे हैं।" उसने जवाब दिया।

इस प्रश्न का अर्थ गुरु के लड़के ने यों बताया। आप के घर में कितने छोटे बच्चे हैं? आपका प्रश्न था, इस पर मेरे पिता जी ने कहा—"मेरे चार लड़के हैं, और कई पोते हैं।"

फिर भार्गव ने पूछा—"लगता है, आप अप्सरा कान्ति कन्या को लाते रहते हैं? क्या यह सच है?"
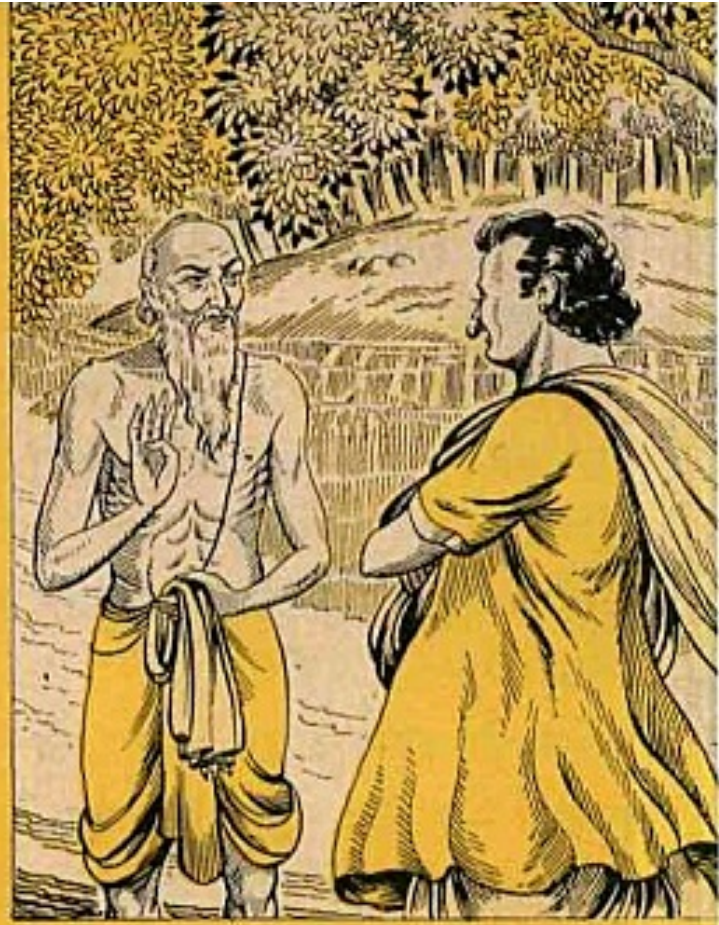
इस पर गुरु ने कहा—"नहीं, कान्ति कन्या के लाये जाने पर उसको वस्त्र, आभूषण आदि देकर, भेजना पड़ता है न? इसलिए हम अपनी कन्या पर ही भरोसा किये हुए हैं। वह हमारे लिए काफ़ी है?"

गुरु के लड़के ने इसका अर्थ यों बताया—"क्या धन उधार लेते है? यह आपका प्रश्न था। पिताजी का उत्तर था, नहीं, हम अपनी कमाई पर ही गुज़ारा करते हैं?"

भार्गव अब भी न माना। उसने पूछा—"कल्पवृक्ष का आश्रय लेना चाहिए,

क्या एक छोटे से तिनके का आधार लेना ठीक है ?"

इसका उत्तर कर्मठीय ने यों दिया—"कल्पवृक्ष न हो, तो तिनका कहाँ से आयेगा ? तिनकों के इकट्ठा करने से ही स्वच्छता आती है और स्वच्छता ही लक्ष्मीप्रद है।"

गुरु के लड़के ने इस समस्या को यों सुलझाया—"बिना राजा के ग्राम नहीं रहेगा। यदि मैं ही उपेक्षा करूँ, तो कौन उसको ठीक करेगा। सब गाँववाले शिक्षित होकर, एक होकर रहें, तो गाँव की उन्नति होगी। गाँव के बुद्धिमान लोगों को राजा का आश्रय भी तो मिल सकता है। यह पिताजी का जवाब था।"

जब यों बातचीत चल रही थी, तो गुरु की तीन वर्ष की पोती, जल्दी-जल्दी तालाब के पास भागी-भागी आयी। आते ही उसने बाबा पर प्रश्नों की वर्षा कर दी।

उस लड़की को देखकर, भार्गव बड़ा खुश हुआ। उसने कहा—"मैं एक प्रश्न करूँगा। जवाब दोगी ?"

"पूछिये।" लड़की ने कहा।

"मौन रहने के लिए क्या करना चाहिए ?" भार्गव ने पूछा।

बिना झिझके एक साँस में वह लड़की कह गई—"शोर करना चाहिए।" यह कहकर, वह झट मुड़कर घर चली गई।

सब हँसे। भार्गव को आश्चर्य हुआ। उसने बिना किसी सन्देह के अपने लड़के को, कर्मठीय के गुरुकुल में प्रविष्ट कर दिया। कालक्रम से दीपक बड़ा विद्वान हुआ और कुल दीपक होकर, पिता को कीर्ति लाया।
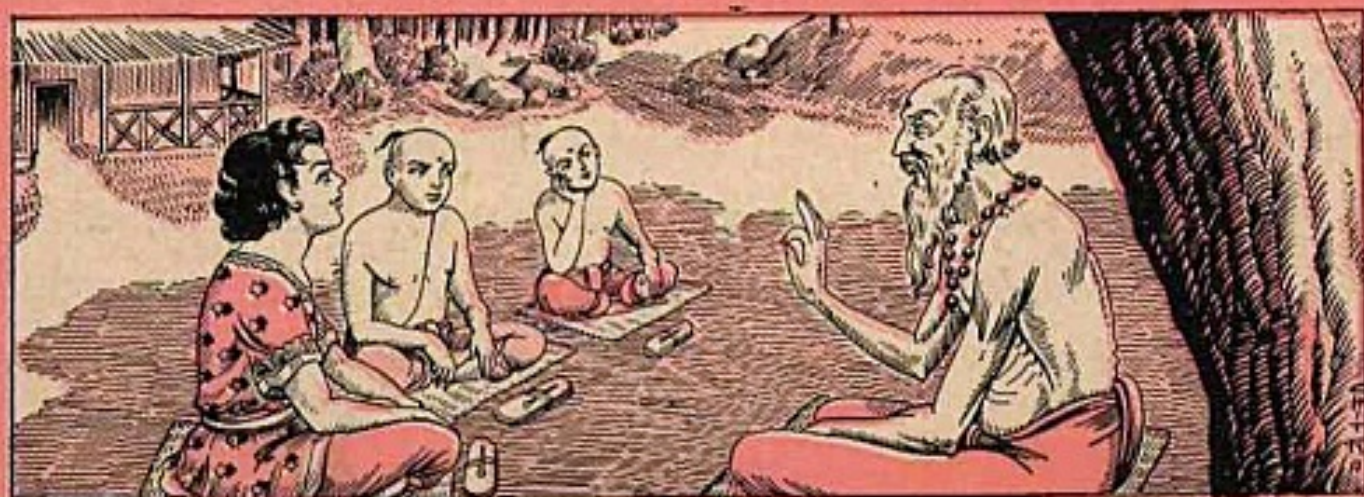
नारद का शाप

एक दिन नारद हिमवान के घर गया।

हिमवान ने उसका सत्कार करके कहा—"यदि मुझ से आपको कोई काम हो, तो आज्ञा हो...."

"मैं तपस्या करना चाहता हूँ। ब्रह्मा से जब मैंने पूछा कि कहाँ निर्विघ्न रूप से तपस्या की जा सकती है, तो उन्होंने बताया कि आपके आधीन एक प्रस्रुवण पर्वत है और उसमें प्रसव कन्दरा है। उसमें एक बड़ा वटवृक्ष है। वहीं शिव ने तपस्या करके पार्वती को पाया था। वहीं मैं निर्विघ्न तपस्या कर सकता हूँ। मुझे वह प्रदेश दीजिये।" नारद ने कहा।

हिमवान इसके लिए मान गया। नारद प्रसव कन्दरा में, वटवृक्ष के नीचे तपस्या करने लगा। देवेन्द्र यह सुन घबराया। उसने नारद की तपस्या भंग करने के लिए रम्भा आदि अप्सराओं को भेजा। अप्सरायें प्रसव कन्दरा के पास जाकर, नारद के सामने नाचने गाने लगीं। नारद बिल्कुल विचलित नहीं हुआ। अप्सराओं को देखकर हँसा और उनको उसने देवलोक जाने के लिए कहा। शाप से वे बच गये थे, इसलिए वे खुशी खुशी चली गईं।

कुछ दिनों बाद, नारद तपस्या समाप्त करके, कैलाश जाकर, शिव से मिला। शिव खुश हुए। नारद ने उनसे कहा—"जिस प्रसव कन्दरा में आपने तपस्या की है, उसी में मैंने तपस्या की थी। भेद यह है कि मन्मथ ने पार्वती द्वारा आपको आकर्षित किया तो आप संयम न कर सके। गुस्से में मन्मथ को भस्म कर दिया।

कणाद

बारे में और कैलाश में उसका शिव के साथ जो सम्भाषण हुआ था, उसके बारे में विष्णु को बताकर, कहा—"शिव ने मुझे बहुत मनाया कि मैं यह आप से न कहूँ।"

"ऐसी स्थिति में तुम्हें मुझे यह सब नहीं बताना चाहिये था। पर यह सब ब्रह्मा को न बताना।" विष्णु ने कहा।

नारद विष्णु से विदा लेकर, ब्रह्मा को देखने सत्य लोक के लिए निकला परन्तु रास्ते में उसे आश्चर्य हुआ। उसने एक ऐसा नगर देखा, जो उसने पहिले कभी नहीं देखा था। नारद यह अनुमान न कर सका कि वह कैसे भटक गया था, वह उस नगर में घुसा। वहाँ नागरिकों ने नारद का बड़ा सम्मान किया और उसे राजा के पास ले गये। उस राजा का नाम शीलनिधि था। उसकी लड़की विश्वमोहिनी का अगले दिन ही स्वयंवर हो रहा था। राजा ने अपनी लड़की को नारद को दिखाया। उससे प्रणाम करवाया और नारद से उसे आशीर्वाद देने के लिए कहा।

विश्वमोहिनी को देखते ही, नारद पगला-सा गया। उसने ऊपर से उसको

परन्तु पार्वती को स्वीकार करके, आप वस्तुतः उससे पराजित हो गये। मुझे भी मन्मथ ने अप्सराओं द्वारा विचलित करना चाहा। न मैं क्रुद्ध हुआ, न उससे पराजित ही, अप्सराओं को मुस्कराकर भेज दिया।" नारद ने सगर्व कहा।

शिव ने कुछ सोचकर कहा—"यह वचन दो कि तुम यह विष्णु से नहीं कहोगे।" नारद इसके लिए मान गया। शिव से विदा लेकर, वैकुण्ठ चला गया। विष्णु ने नारद का स्वागत करके, कुशल समाचार पूछा। नारद ने अपनी तपस्या के

आशीर्वाद तो दे दिया, पर अन्दर ही अन्दर उसके लिए तपने-सा लगा।

नारद ने विष्णु का ध्यान किया। विष्णु प्रत्यक्ष हुए। नारद ने उनको अपनी समस्या सुनाकर कहा—"जैसे भी हो, आप देखिये कि राजकुमारी कल मुझे ही वरे...."

विष्णु ने हँसकर कहा—"डरो मत, मैं तुम्हारी मदद करूँगा।" कहकर वह अन्तर्धान हो गये।

अगले दिन स्वयंवर था। भिन्न-भिन्न देशों से राजकुमार आये और स्वयंवर मण्डप में अपनी अपनी योग्यता के अनुसार पदोचित स्थान पर बैठ गये। उनके बीच में नारद भी बैठ गया। विश्वमोहिनी वर माला हाथ में लेकर, एक एक राजकुमार को देखती आ रही थी। विष्णु के प्रभाव के कारण, नारद भी अपने आप को एक राजकुमार-सा दीख रहा था। दूसरों को एक ऋषि-सा दिखाई दे रहा था—परन्तु राजकुमारी को एक बन्दर की तरह दिखाई दे रहा था। वह नारद के पास आयी। उसे देखकर, वह हँसी। फिर, उसने एक और राजकुमार के गले में माला डाल दी।

नारद बड़ा क्रुद्ध हुआ। वह वहाँ से उठकर चला गया। उससे वेष बदले, शिवशंकर ने जो वहाँ थे, कहा—"तुम अपना बन्दर-सा मुँह पानी में देख लो।" नारद ने जब पानी में देखा, उसको अपना बन्दर का मुँह साफ़-साफ़ दिखाई दिया। नारद गुस्से को काबू में न रख सका। "दुष्ट कहीं के, मुझे देखकर, जो हँसे, वे राक्षस हो जायें। चूँकि तुमने मुझे बन्दर कहा है। इसलिए तुम बन्दरों के हाथ मारे जाओगे।" उसने उनको शाप दिया। विष्णु पर भी बड़ा गुस्सा आया, क्योंकि

उसने सहायता का वचन देकर, उसका अपमान किया था। ठीक उसी समय विश्वमोहिनी को साथ लेकर, विष्णु नारद के पास आया।

नारद ने विष्णु से कहा—"तुम शुरु से ही छली हो, क्षीर सागर में मथने पर जो विष निकला था, उसे शिव को दे दिया और स्वयं लक्ष्मी और कौस्तुभ को हथिया लिया। अब राजकुमार के रूप में आकर, तुम उस राजकुमारी को ले गये और मुझे विरह बाधा दी। इसलिए तुम दोनों मानव जन्म लो। पति पत्नी बनाकर, विरह भुगतो। तुमने चूँकि मुझे बन्दर बनाया था, इसलिए तुम बन्दरों की शरण लोगे।" उसने शाप दिया। "ठहरो नारद, ठहरो।" विष्णु ने कहा। इतने में वह नगर अदृश्य हो गया। विश्वमोहिनी के स्थान पर लक्ष्मी खड़ी थी।

"नारद! तुमने, तो मन्मथ को जीत लिया था, फिर तुम कैसे एक स्त्री के लिए यूँ तड़प उठे? तुमको तो यह गर्व था कि तुमने क्रोध को जीत लिया है, फिर ये शाप क्या है।" विष्णु ने नारद से पूछा। नारद, विष्णु के पैरों में पड़ा। उसने उससे क्षमा माँगी।

"उठो नारद, पछताओ मत। जो लोक कल्याण के लिए किया जाना चाहिए था, वह तुम्हारे मुँह से यूँ निकला। रावण के संहार के लिए, मैं राजकुमार होकर पैदा होऊँगा और मुझे पत्नी का विरह भी भुगतना होगा। ये शिवशंकर, अक्षय, प्रहस्त के नाम से राक्षस रूप में पैदा होंगे और हनुमान के हाथ मारे जायेंगे। मैं वानरों की सहायता से राक्षसों का संहार करूँगा।" कहकर, विष्णु लक्ष्मी के साथ अन्तर्धान हो गये।

विचित्र घटना

कई सौ वर्ष पहिले किसी देश के एक नगर में एक धनी रहा करता था। उसे अपनी पत्नी से बड़ा प्रेम था। पत्नी को एक बार कुछ बेहोशी-सी आयी। जो साधारण रूप से खड़ी थी, वह यकायक गिर पड़ी और हाथ पैर पीटने लगी, फिर पथरा-सी गई। शरीर ठंडा पड़ गया और साँस रुक गई। लोगों ने सोचा कि वह कोई नये ढ़ंग की बीमारी थी। वैद्य ने भी बताया कि वह मर गई थी।

रईस को बड़ा दुःख हुआ कि उसकी प्रिय पत्नी मर गई थी। जब उसको ताबूत में रखा गया, तो उसने उसके हाथ में हीरे की अंगूठी रखी। बन्धुओं ने पूछा—"शव को क्यों अंगूठी पहिना रहे हो, उनके और गहनों के साथ, यह भी बच्चों के पास रह जायेगा।"

"यह अंगूठी उसको अधिक प्यारी थी। मैंने इसे उसको हमेशा के लिए देदिया है—कुछ दिन पहिनने के लिए नहीं...." पति ने कहा। कई ने, कई तरह कहा, पर उसका ईरादा नहीं बदला।

ताबूत को गिरजाघर ले जाया गया। वहाँ के प्राँगण में उसने पत्नी की समाधि बनवायी। फिर वह दुःखी दुःखी घर वापिस आ गया। जब यह संस्कार किया जा रहा था, तो एक आदमी ने देखा कि शव के हाथ में एक अंगूठी थी। वह गिरजा घर में समाधि बनाने, बनवाने का काम ही देखा करता था।

"इतनी कीमती अंगूठी को भूमि में गाड़ देना ठीक नहीं है। यदि इसे बेचा

रामचन्द
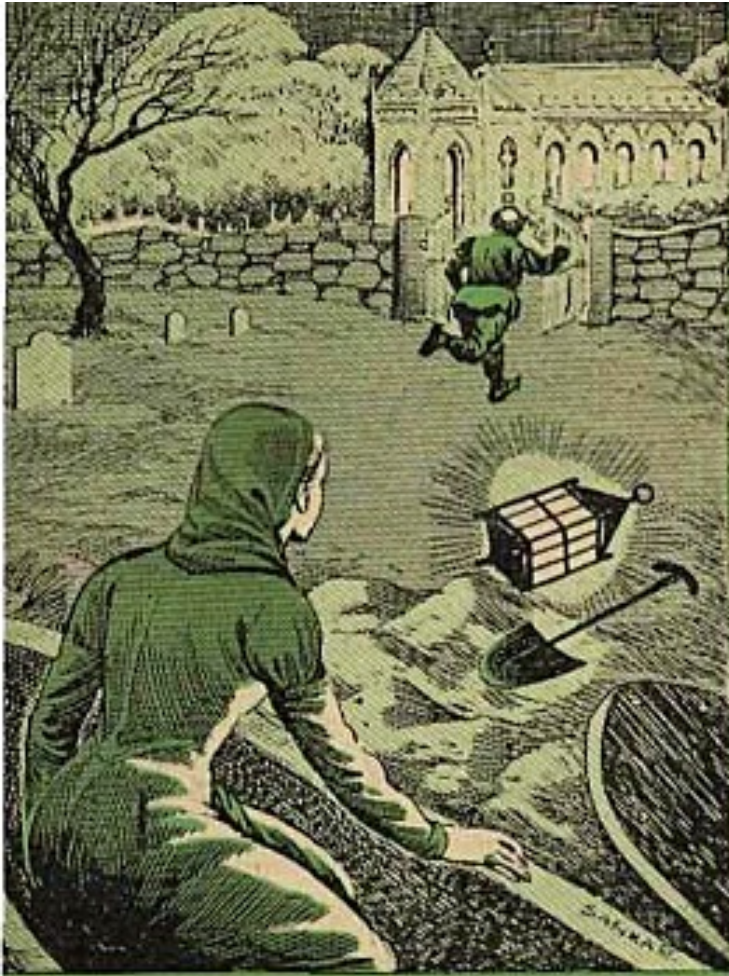
गया, तो बहुत-सा धन मिलेगा।" उस गिरजा घर के नौकर ने सोचा। उसने उसे लेने की ठानी, वह दिन-भर यही सोचता रहा। उस दिन रात को अन्धेरे में बिना किसी को दीखे, प्राँगण में चला गया। उस ताबूत को निकाला और उसका ढ़क्कन हटाया। लालटेन की रोशनी में उस अंगूठी का हीरा खूब चमकने लगा। जब वह शव के हाथ से वह अंगूठी उतार रहा था, तो शव का हाथ हिला और कुछ खोजते खोजते उसने ताबूत का सिरा पकड़ लिया। शव को जब उसने ताबूत में से उठने का प्रयत्न करते देखा, तो उसके हाथ से लालटेन गिर गई और बुझ गई और वह तेज़ी से भाग गया।

सच कहा जाये, तो रईस की पत्नी को एक तरह बेहोशी आयी थी—कोई बीमारी न थी। जब गिरजाघर के नौकर ने ताबूत का ढ़क्कन हटाया था, तभी उसको होश आना शुरु हो गया था। जल्दी ही वह ताबूत में उठ खड़ी हुई। चारों ओर अन्धेरा था। उसे क्या हो गया था और वह कहाँ थी, इस बारे में वह कुछ देर तक न जान सकी। अपने शरीर पर कफ़न और दूर गिरजा घर की चोटी देखकर, वह जान गई कि उसे क्या हुआ था।

उसने कफ़न को उतार फेंका। उठकर उसने सोचा—"न मालूम, मेरा पति यह जानकर कितना दुःखी हुआ होगा कि मैं मर गयी हूँ। न मालूम बच्चे कितने दुःखी हुए होंगे। उसने तुरत घर जाना चाहा। पर उसके शरीर में शक्ति बहुत कम रह गई थी। वह मुश्किल से कदम के बाद कदम रखती, आँगन पार करके, सड़क पर आयी। उसको सहारा देकर, घर ले जाने

के लिए कोई आदमी वहाँ न था। रास्ता बिल्कुल निर्जन था। ठंड भी अधिक थी।

जैसे तैसे जब वह घर पहुँची, तो घर का मुख्य द्वार बन्द था। जब उसने उसे बहुत देर खटखटाया, तो नौकरों में से एक उठकर आया—उसने किवाड़ कुछ खोलकर पूछा—"कौन हो तुम? यह घर दुःख में डूबा हुआ है और तुम यों किवाड़ खटखटा रही हो?"

"मैं ही हूँ। तुम्हारी मालकिन। मुझे अन्दर जाने दो भाई...." उसने कहा।

नौकर ने अपने हाथ की लालटेन की रोशनी में अपने मालकिन को पहिचान लिया। उसका मुँह कुम्हला-सा गया था। पर वह भूत की तरह न थी। उस विचारे को यह न समझ में आया कि जो सवेरे मर गई थीं, जिनको गाड़ भी दिया गया था, वे इस रात के समय जीते जी कैसे यहाँ आ सकती हैं?"

"खैर, तुम ही मालकिन हो, मान लो" पर तुम्हें तो गाड़ भी दिया गया था। तुम मालकिन कैसे हो सकती हो, पता नहीं लग रहा है।" उसने कहा।

"मैं ही हूँ....मैं ही हूँ....मुझे अन्दर आने दो।" मालकिन ने गुस्सा किया।

आखिर उसने सोचा कि यह सब अपने मालिक को बताया जाये और जो वे कहें वैसा ही किया जाय। उसने किवाड़ बन्द कर दिये और सीढ़ियों पर चढ़कर अपने मालिक के शयनकक्ष में गया।

यद्यपि वे भारी किवाड़ कुछ खुले हुए थे, फिर भी उनको अधिक खोलने की शक्ति उसमें न थी, इसलिए वह वहीं बैठकर रोने लगी। उसने सोचा था कि उसके घर पहुँचते ही, घर के लोग, उसका खुशी में स्वागत करेंगे। उसने न सोचा था कि उसकी यह हालत होगी।

नौकर ने आकर जब पुकारा, तो मालिक सो नहीं रहा था। वह शोक समुद्र में इस कदर डूबा हुआ था कि उसने किसी का किवाड़ खटखटाना भी न सुना। नौकर के आने की आहट सुनकर उसने पूछा—"क्यों, क्या बात है, क्या चाहिये?"

"मालिक, मालकिन आयी हैं? क्या अन्दर आने दूँ? जो आपकी आज्ञा?" नौकर ने पूछा।

मालिक ने बिस्तर पर बैठकर पूछा—"अरे, क्या तुम ख्वाब देख रहे हो? या पागल हो गये हो?"

"सो तो गया था, पर जब मालकिन ने किवाड़ खटखटाया तो उठ पड़ा। हुजूर दिमाग तो नहीं बिगड़ा है। पर क्या करूँ सोच नहीं पा रहा हूँ। क्या मालकिन को अन्दर आने दूँ।

"क्या परिहास का यही समय है? कितना भयंकर परिहास है?" मालिक ने कहा।

"परिहास नहीं, मालकिन बाहर हैं। आने दूँ क्या?" उसने फिर पूछा।

मालिक ने फिर लेटते हुए कहा—"अब कहाँ है मालकिन? पगले कैसे विश्वास करूँ कि वह किवाड़ के पास है? भले ही मैं यह विश्वास कर लूँ कि हमारे घोड़े सीढ़ियों से ऊपर आ रहे हैं।"

नौकर एक हाथ में लालटेन लेकर, दूसरे हाथ से सिर खुजलाने लगा। मालिक ने आखिर, यह न बताया था कि मालकिन को अन्दर आने दिया जाये कि नहीं।

इतने में उसको सीढ़ियों पर आहट सुनाई दी।

नौकर ने लालटेन उठाकर जो देखा कि मालिक के दोनों सफेद घोड़े सीढ़ियों से ऊपर आ रहे थे।

उसने मालिक के पास फिर जाकर घबराकर कहा—"जी हुजूर, हमारे घोड़े सीढ़ियों पर से ऊपर आ रहे हैं...."

सीढ़ियाँ लकड़ी की थीं और जब घोड़े उन पर से आ रहे थे, तो बड़ी आवाज़ हो रही थी। अगर मालिक को कोई सन्देह भी था, तो इस बीच उसे घोड़ों का हिनहिनाना भी सुनाई दिया।

मालिक झट बिस्तरे पर से उठा। नौकर के हाथ से लालटेन लेकर वह जल्दी-जल्दी नीचे उतरा। मुख्य द्वार खुला हुआ था। बाहर अन्धेरे में कोई न था। जब हल्का-हल्का किसी का रोना सुनाई पड़ा, तो देखा कि उसकी पत्नी नीचे पड़ी हुई थी।

उसका दिल धक-धक करने लगा। वह अपनी पत्नी को अपने हाथों में उठाकर ऊपर ले गया। उसकी सेवा शुश्रुषा की। सवेरे तक वह बिल्कुल ठीक हो गई। जब बच्चों ने अपनी माता को जीते जी देखा, तो उनके आनन्द की कोई सीमा न थी।
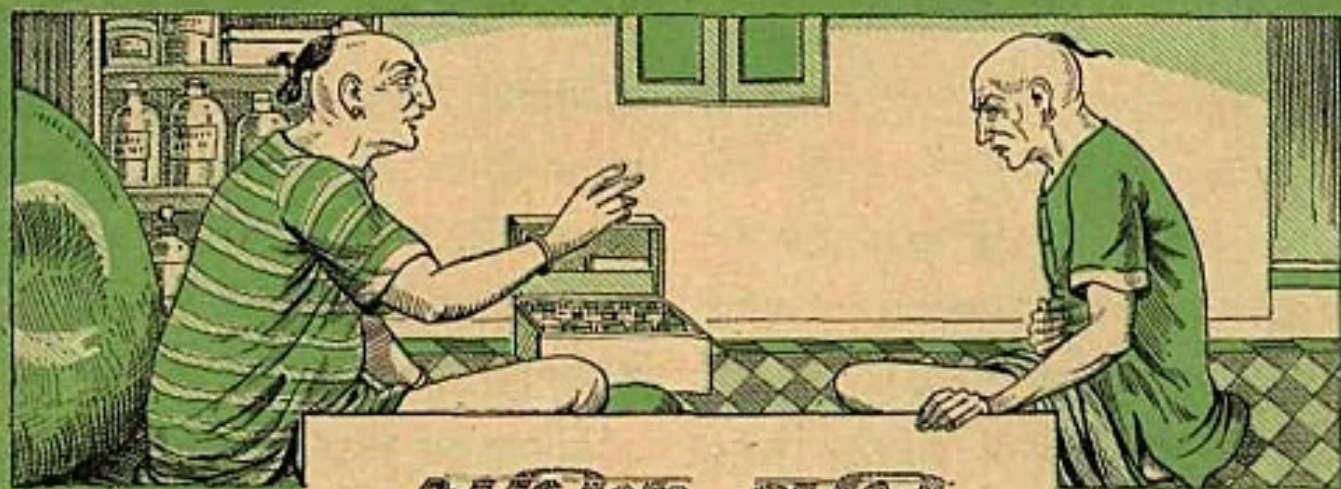
अविवेक बुद्धि

एक गाँव में एक संस्कृत पंडित रहा करता था। वह पंडित तो था, पर लोकज्ञान उसमें बिल्कुल न था। यदि उस गाँव में आकर कोई पुराण पाठ करता, तो परिचित पदों का निरुक्त देखकर विचित्र विचित्र अर्थ निकालकर खलबली पैदा कर देता।

वह पंडित एक बार अजीर्ण के कारण वैद्य के पास गया। "इसमें क्या है, कंटकारिकषाय तीन बार दिन में पीजिए, कम हो जायेगा।" वैद्य ने कहा।

"कंटकारि कषाय....अच्छा, अच्छा, हाँ, जान गया।" कहकर पंडित घर गया।

घर आकर उसने शब्दकोश उलटा, पलटा, फिर मन ही मन सोचने लगा "कंटक" का अर्थ काँटा है। उसका शत्रु है, पादरक्षक। यह सोचकर' उसने अपनी चप्पल निकाली, उसके टुकड़े टुकड़े करके कषाय बनाकर पी गया।

तीन बार कषाय पीने के बाद पेट दर्द और भी बढ़ गया।

पंडित फिर वैद्य के पास गया। उसको बताया कि उसकी दी हुई दवाई ने कोई असर नहीं किया था।

पंडित की बातें सुनकर, वैद्य ने यों कहा—"अरे, तो ठीक नहीं हुआ? इस बार एक काम कीजिए। 'लंघनं परमौषधं' शास्त्र में लिखा है। इससे बढ़कर कोई चीज़ नहीं है। जैसे और जहाँ तक यह सम्भव हो, वैसा सोचकर कीजिए।"

पंडित ने इस प्रकार सिर हिलाया, जैसे उसे वैद्य की बात मालूम हो गयी हो और घर चला आया। फिर उसने शब्दकोष

कमल नयन

देखा। "लंघनं" का अर्थ कूदना, या पार करना।

"वाह....बड़ा वैद्य है वह। उस दिन हनुमान ने जो महा कार्य किया था, आज मुझे चिकित्सा के रूप में करने के लिए कह रहा है।" पंडित यह सोच सन्तुष्ट हुआ।

पंडित जहाँ रहता था, उसके पास ही एक नहर थी। पंडित ने धोती कसी। मन में एक बार हनुमान का ध्यान किया, फिर नहर से इस पार, और उस पार कूदने लगा।

चूँकि बदहजमी थी, फिर वैद्य ने खाना भी बन्द कर रखा था, इस हालत में कूदने फाँदने से वह थक थका गया। मूर्छित हो गिर गया। सारे शरीर पर चोट लग गई। लोग उसको तुरत वैद्य के पास ले गये। वैद्य ने मरहम पट्टी की। कमजोरी के लिए दवा दी। थोड़ी देर बाद उसको होश आया। वैद्य ने पूछा—"क्यों लंघन (उपवास) करके उस नहर के किनारे यूँ कूद फाँद रहे थे? पंडित ने उसको शब्दकोश में "लंघन" का अर्थ दिखाकर कहा—"आपही ने जैसे करने के लिए कहा था, वैसे मैंने किया...."

वैद्य के आश्चर्य की सीमा न थी। थोड़ी देर पूछताछ करने के बाद उसको मालूम हुआ कैसे कंटकारिकषाय बनाकर उसने लिया था, यह भी बताया।

तब वैद्य ने कहा—"ओह पंडितवर्या, मैं जब दवाइयाँ बताऊँ तो उनके बारे में दुकान में पूछिये, न कि शब्दकोश देखिये। नहीं तो इसी तरह के खतरे आते रहेंगे।" उसे यों समझाया।

काशी राज्य में एक गरीब विद्यार्थी रहा करता था। उसका नाम प्रसन्नचन्द्र था। वह विद्याध्ययन समाप्त करके, काशी नगर में कोई नौकरी करने के ईरादे से अपने गाँव से पैदल निकल पड़ा। उसका ताऊ सोमचन्द्र कभी विद्याध्ययन के बाद, काशी गया था। वहाँ उसने आवश्यक परीक्षायें उत्तीर्ण करके धर्माधिकारी के पद पर कुछ दिन काम किया—थोड़े समय पहिले ही वह मर गया था। काशी जाकर, किसी परीक्षा में उत्तीर्ण होकर, कोई एक नौकरी पाने का प्रसन्नचन्द्र ने निश्चय किया।

वह चलता चलता एक दिन शाम को एक गाँव पहुँचा और वहाँ वह एक धर्मशाला में ठहरा। लगातार वर्षा हो रही थी। ठंड अधिक थी।

प्रसन्नचन्द्र धर्मशाला के व्यवस्थापक को पैसे देकर, अंगीठी मँगवाकर आग सेक रहा था कि बाहर से एक भिखारी आया और बाहर खड़े होकर, काँपने लगा।

प्रसन्नचन्द्र को उस अभागे की हालत देखकर, दया आयी। उसने उससे कहा—"आओ, तुम भी आकर सेको।" भिखारी भी आग सेकने लगा।

इतने में धर्मशाला के व्यवस्थापक ने एक थाली में प्रसन्नचन्द्र के लिए भोजन भेजा। भिखारी की नज़र उसी थाली पर थी, प्रसन्नचन्द्र ने वह थाली उसको दे दी। जो भोजन लाया था, उससे एक और थाली भोजन लाने के लिए कहा।

भिखारी ने खूब पेट-भर खाना खाया। वह उस दिन रात को प्रसन्नचन्द्र के कमरे

में ही सोया। अगले दिन सवेरे उसने जाते जाते कहा—"हुजूर, जो आपने कृपा दिखाई है, मैं उसके लिए बड़ा कृतज्ञ हूँ। आपका ऋण चुकाने के लिए मेरे पास पैसा नहीं है। मैं आपको तीन छोटी पोटलियाँ देता हूँ। उन पर एक, दो, तीन, अंक लिखे हुए हैं। जब आपके सामने कोई समस्या आ जाये और आपको रास्ता न मिल रहा हो, तो आप इसमें से एक पोटली खोलकर पढ़िये। यदि आप उसमें लिखी सलाह पर चले, तो आपका फायदा होगा। परन्तु एक बात का ख्याल रखना, जब विषम परिस्थिति आ पड़े, तभी खोलना नहीं तो नहीं। फिर उनको क्रम से ही खोलना, यानि पहिले पहिली, फिर दूसरी, फिर तीसरी।" प्रसन्नचन्द्र को तीन तहियाये हुए कागज़ देकर, वह चला गया।

उस भिखारी की बात की प्रसन्नचन्द्र ने कोई परवाह नहीं की। भिखारी क्या नहीं करते? फिर भी उसने, वे कागज़ ले लिये और उनको अपने थैले में, पुस्तकों के बीच रख लिया। भिखारी के चले जाने के बाद, वह भी धर्मशाला के व्यवस्थापक को कुछ दे दाकर चल पड़ा।

प्रसन्नचन्द्र काशी पहुँचा। वहाँ उसने एक कमरा किराये पर लिया। विद्वत्परीक्षा में बैठा, परन्तु उत्तीर्ण न हुआ। जो कुछ पैसा वह साथ लाया था, वह भी खतम हो गया।

फिर दो वर्ष तक परीक्षायें नहीं होनी थीं। तब तक क्या किया जाय? प्रसन्नचन्द्र को कुछ नहीं सूझा।

उस समय उसको भिखारी के दिये हुए कागज़ याद आये। सचमुच वह विषम परिस्थिति में था, उसका कोई परिष्कार नहीं था। इसलिए उसने "एक" अंकवाले कागज़
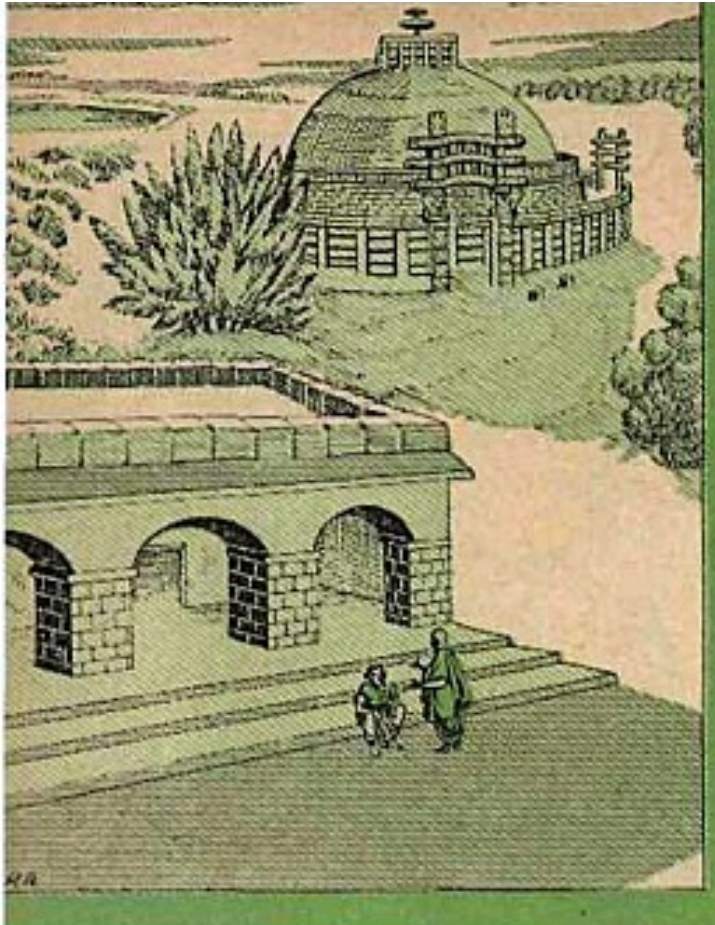
को देखा, उसमें लिखा था—"सारनाथ आराम के द्वार पर जाकर बैठो...."

यह सलाह देखकर प्रसन्नचन्द्र हताश हो गया। फिर थोड़ी देर सोचने के बाद, उसे लगा कि इसमें कोई हानि न थी। जहाँ वह रह रहा था, वहाँ से सारनाथ छः मील दूर था। प्रसन्नचन्द्र दुपहर को निकल पड़ा। शाम को वहाँ पहुँचा। वह एक "आराम" में पहुँचा और उसके पास सीढ़ियों पर बैठ गया।

अन्धेरा हो रहा था कि आराम पालक उस तरफ़ आया। "क्यों भाई, यहाँ क्यों बैठे हो? अन्धेरा हो रहा है। ठंड बढ़ रही है। जो तुम्हारा गाँव है वहाँ तुम चले जाओ।"

"नहीं आज रात कृपया मुझे यहीं काटने दीजिये।" प्रसन्नचन्द्र ने कहा।

"अगर रात भर यहीं लेटे रहे, तो सवेरे उठ न सकोगे। यदि कहीं जाने की जगह न हो तो अन्दर चले आओ। तुम्हारे खाने-सोने की व्यवस्था कर दूँगा।" आराम पालक यह कहकर, प्रसन्नचन्द्र को अन्दर ले गया।

जब दोनों बैठकर बातें करने लगे, तो बातों बातों में पता लगा कि काशी नगर का धर्माधिकारी सोमचन्द्र उसका ताऊ ही था।

"अच्छा हुआ कि आज हम मिले। तुम्हारे ताऊ ने हमारे आराम को कितना ही दान दिया था। यह तो जाने दो। मरने से कुछ दिन पहिले, वे गया जाते जाते मेरे पास दो हज़ार मुहरें रखवा गये थे। कह गये थे कि वापिस आकर ले लेंगे। पर लौटने से पहिले ही वे गुज़र गये। वह धन मेरे पास ही है, काशी में बहुत पूछ ताछ की, पर उनका कोई उत्तराधिकारी

न मिला।" यह बताकर आराम पालक ने दो हज़ार मुहरें उसे लाकर दीं।

उस धन के कारण प्रसन्नचन्द्र की गरीबी जाती रही। वह नगर में एक घर खरीदकर वहाँ आराम से रहने लगा।

परन्तु उसकी पद पाने की इच्छा पूरी न हुई। जब फिर दो वर्ष बाद परीक्षा हुई, उसमें भी वह फेल हो गया। जब वह दो बार असफल रहा, तो उसे लगा कि फिर कभी सफल न हो सकेगा। जब तीसरी बार परीक्षा की तैय्यारी करने के लिए उसने पुस्तकें उठायीं तो उसको भिखारी के दिये हुए दोनों कागज़ दिखाई दिये।

क्योंकि वह ऐसी ही परिस्थिति में था, जिसका कोई परिष्कार न था, उसने दूसरे अंकवाला कागज़ निकाला, उसमें लिखा था—"उत्तर द्वार के पास नन्द किशोर की हलवाई की दुकान पर जाओ।"

प्रसन्नचन्द्र उस दुकान पर गया, यह कहकर कि उसे रोटी, मिठाई, दूध वगैरह चाहिए थे—वह झट नन्द किशोर की दुकान के अन्दर बैठ गया। अन्दर दो आदमी बैठे बैठे बातें कर रहे थे। उनके

सम्भाषण से वह जान गया कि वे परीक्षक थे। उसने उनकी बातचीत सुनी। वे आनेवाली परीक्षा में क्या क्या प्रश्न देने जा रहे थे, उनके बारे में बातचीत कर रहे थे।

"तुम्हारे प्रश्नों में से मैं एक का भी उत्तर नहीं जानता हूँ, यह मैं कह सकता हूँ।" एक परीक्षक ने कहा।

"यदि हम ही परीक्षा में बैठे, तो पास न हो सकेंगे।" दूसरे ने कहा।

वे जब खा पीकर चले गये, तो उन्होंने जो जो प्रश्न किये थे, उन्हें याद करके उसने एक पर्चे पर लिख लिये।

इस बार वह परीक्षा में उन्नत श्रेणी में पास हुआ। उसे न्यायाधिकारी का पद मिला। वह विवाह करके सुख से रहने लगा। अधिकारी के रूप में भी वह लोकप्रिय हो गया। राज सभा में भी उसके निर्णयों की प्रशंसा हुई। बिना किसी समस्या के जीवन बीतता गया। आखिर उसको बीमारी हुई। बीमारी दवा दारु से ठीक न हुई, वह बढ़ती गई। कोई उसका इलाज न कर सका। इतने दिनों बाद, प्रसन्नचन्द्र के सामने फिर विषम परिस्थिति आयी। जब उसने तीसरे कागज़ को खोलकर पढ़ा, तो उसमें लिखा था—"अपना वसीयतनामा लिख लो।"

प्रसन्नचन्द्र ने सोचा कि यह ही उसकी आखिरी समस्या थी। उसने अपने वसीयतनामे में लिखवाया कि किस किसको क्या सम्पत्ति मिलनी चाहिए थी। सब को तदनुसार सम्पत्ति देकर, वह निश्चिन्त हो गुज़र गया।

युद्धकाण्ड

रावण को यह जानकर बड़ा गुस्सा आया कि अकम्पन मर गया था। वह अपने दरबार में से उठा, अपने व्यूहों का निरीक्षण करता, सारी लंका घूम आया। उसने लंका के चारों ओर वानरों का घेरा भी देखा।

दरबार में आकर, प्रहस्त को देखकर उसने कहा—"वानरों का घेरा और नहीं हटा सकते। वह काम मैं, तुम, कुम्भकर्ण, इन्द्रजित और निकुम्भ ही कर सकते हैं। तुम सेना के साथ जाकर, वानरों को जीतकर आओ।"

प्रहस्त उन लोगों में था, जिनका यह ख्याल था कि सीता को वापिस देकर, राम से सन्धि कर लेना ही लाभप्रद था। सन्धि हुई नहीं और युद्ध आ ही पड़ा और युद्ध में प्रहस्त, रावण के लिए प्राण तक देने को तैयार था। वह रथ पर सवार होकर युद्ध करने के लिए निकल पड़ा।

प्रहस्त को ज़ोर शोर से आता देख, राम ने विभीषण से पूछा—"यह कौन आ रहा है। बहुत पराक्रमी मालूम होता है।"

"वह प्रहस्त है। बड़ा शूर है। रावण की तीन चौथाई सेना उसके आधीन है।" विभीषण ने कहा।

इस बीच वानर वीर, प्रहस्त को देखकर गर्जन करने लगे। वे पत्थर और पेड़

पकड़कर युद्ध के लिए तैयार हो गये। युद्ध में दोनों तरफ़ काफ़ी वीर मारे गये। नरान्तक, कुम्भहन, महानाद, समुन्नत नाम के योद्धाओं ने असंख्य वानर मारे, पर आखिर वे द्विविदा, दुमुख, जाम्बवन्त, तार नामक वानर वीरों के हाथ मारे गये।

नील ने प्रहस्त का मुकाबला किया। खूब लड़ा। घायल भी हो गया। परन्तु आखिर उसने प्रहस्त का सिर चकनाचूर करके उसे मार दिया। प्रहस्त मर जाने के बाद, बाकी राक्षस भयभीत हो, लंका में भाग गये। राम, लक्ष्मण और सुग्रीव ने नील की बहुत प्रशंसा की।

प्रहस्त की मृत्यु की खबर सुनकर, रावण को गुस्सा आया और दुःख भी। उसने अपने चारों ओर खड़े राक्षस वीरों से कहा—"यदि इन वानरों ने देवताओं को जीतनेवाले प्रहस्त को ही मार दिया है, तो ये वानर मामूली नहीं हैं। अब मुझे लापरवाही नहीं करनी चाहिए। मैं स्वयं ही युद्ध में जाऊँगा, मैं अपने बाणों से राम, लक्ष्मण और वानर सेनाको जला दूँगा।"

रावण अपने रथ पर सवार होकर, सेना को साथ लेकर, वानरों से युद्ध करने निकल पड़ा। उसके साथ इन्द्रजित वगैरह भी थे।

विभीषण ने राम को, उन सब के बारे में अलग अलग बताया। राम, रावण का तेज और उसके सैनिकों के शस्त्र देखकर, चकित रह गये।

रावण ने अपने साथ आये हुए राक्षस वीरों से कहा—"तुम वापिस जाकर लंका नगरी की रक्षा करो। नहीं तो निर्जन लंका पर, शत्रु आसानी से आक्रमण कर सकते हैं।"

रावण युद्ध के लिए आ रहा था कि सुग्रीव ने उसका सामना किया। रावण के बाणों से घायल होकर, थोड़ी देर बाद सुग्रीव बेहोश गिर गया।

वानर सेना की रक्षा का भार, राम पर पड़ा। वे बाण चढ़ाकर, रावण से लड़ने के लिए तैयार हो रहे थे कि राम से लक्ष्मण ने कहा—"क्या इसको मारने के लिए आपके जाने की ज़रूरत है? मैं जो हूँ।"

"जाओ, पर होशियारी से युद्ध करना।" राम ने समझाते हुए कहा। चूँकि रावण महान योद्धा था।

लक्ष्मण रावण पर हमला करनेवाला था कि हनुमान रावण के रथ के पास गया। हाथ उठाकर उसने कहा—"मैं तुम्हें अभी एक मुक्के में मार देता हूँ।"

"ज़रूर मारो, कम से कम यह ख्याति रहेगी कि एक बन्दर ने रावण को मारा था। तुम मुझे मारोगे कि नहीं कि मैं अगले क्षण तुम्हारे प्राण निकाल दूँगा।" रावण ने कहा।

"तुम यह न भूलो कि मेरी चोट से तुम्हारा लड़का अक्ष मर गया था।" हनुमान ने कहा। यह सुन रावण ने हनुमान की छाती पर ज़ोर से मारा, उस चोट के कारण हनुमान चकरा गया। उसने रावण की छाती पर मारा। रावण के, उस चोट से छक्के छुट गये। रावण ने सम्भलकर कहा—"शबाश, शत्रु हो तो क्या? तुम में बहुत बल है।"

"मैं इस बल का क्या करूँ? मेरे हाथ की चोट खाकर भी, तुम ज़िन्दे हो। फिर मुझे मारो, मैं तब तुम्हें एक मुक्के में यम के पास भेज दूँगा।" हनुमान ने कहा।

रावण गरमाया। उसने हनुमान की छाती पर मुका मारा और अभी हनुमान चोट खाकर, सम्भल ही रहा था कि नील से युद्ध करने निकल पड़ा। नील से युद्ध करते रावण को देख, हनुमान ने कहा—"एक और से लड़नेवाले पर हमला करना चूँकि ठीक नहीं है, इसलिए मैं इस बार तुम्हें छोड़ देता हूँ।"

नील ने रावण से बहुत विचित्र युद्ध किया। वह बहुत छोटा रूप धारण करके रावण के ऊपर मँड़राया। रावण उसको निशाना बनाकर, बाण छोड़ सका। नील को देखकर, राम, लक्ष्मण और हनुमान चकित हो गये। आखिर रावण ने नील को आग्नेयास्त्र से गिरा दिया। चूँकि अग्निदेव नील का पिता था, इसलिए आग्नेयास्त्र उसे नीचे तो गिरा सका, पर उसे मार न सका।

तब लक्ष्मण ने रावण का मुकाबला किया। युद्ध में एक दूसरे को दोनों ने बेहोश कर दिया। आखिर रावण ने लक्ष्मण पर एक शक्ति का प्रयोग किया। वह शक्ति, उसे ब्रह्मा ने दी थी। उसके लक्ष्मण की छाती पर लगते ही वह मूर्छित हो गया। तब रावण ने उसके पास आकर, उसे उठना चाहा। परन्तु वह उठा न सका।

इतने में हनुमान ने आकर, रावण की छाती पर मारा। रावण चोट खाकर घुटनों के बल गिर गया। खून उगलता, अपने रथ में बेहोश गिर गया। हनुमान लक्ष्मण को उठाकर, राम के पास लाया। थोड़ी देर में लक्ष्मण को होश आया, रावण को भी होश आया।

हनुमान ने राम से कहा—"आप मेरे कन्धे पर सवार होकर, रावण से युद्ध

कीजिये।" राम उसके कहे अनुसार उसके कन्धों पर सवार हो गये। हनुमान राम को रावण के सामने ले गये।

रावण ने, हनुमान पर तेज़ बाण फेंके। यह देख, राम ने गुस्से में रावण के रथ चक्र, घोड़े, ध्वज, सारथी सब नष्ट कर दिये। रावण की छाती पर बिजली का सा बाण छोड़ा। उस चोट के कारण जब रावण गिर गया, तो एक और बाण से उन्होंने उसका मुकुट उड़ा दिया। "राक्षस राजा, युद्ध करके थक गये हो। इसलिए तुम्हें अभी यमपुरी नहीं भेजूँगा, लंका वापिस जाने के लिए अनुमति दे रहा हूँ। जाकर आराम करो। रथ पर सवार होकर, धनुष लेकर, फिर आना, तब तुम्हें अपनी शक्ति दिखाऊँगा।"

रावण अपमानित हो, लज्जित हो, लंका वापिस चला गया। वह अब सचमुच राम से डरने लगा। उसने राक्षसों को बुलाकर यूँ कहा—

"मैं, जो इन्द्र से भी न हराया जा सका। एक मनुष्य द्वारा हरा दिया गया हूँ। मैं नहीं जानता कि मेरी सारी तपस्या-सा क्या हुई है? कभी ब्रह्मा ने कहा था कि मुझे मनुष्यों से खतरा है। जब मैंने पहिले अनरण्य नाम के ईक्ष्वाकु वंश के राजा को मारा था, तो उसने कहा था कि मुझे मारनेवाला उसी के कुल में पैदा होगा। वेदवती का बलात्कार करके, उसका शाप भी पा चुका हूँ। वह वेदवती ही यह सीता है। पार्वती, नन्दीश्वर, रम्भा, पुंजिकस्थल ने जो कुछ कहा था वह आज सच निकल रहा है। इस खतरे का ख्याल करके शत्रु संहार के विषय में तुम और ध्यान दो। द्वार और गोपुरों पर

और सावधानी से पहरा दो। कुम्भकर्ण सो रहा है। उसे उठाओ। मैं यहाँ जाने क्या क्या कष्ट उठा रहा हूँ और वह आराम से सो रहा है। जब युद्ध के बारे में सोचा जा रहा था, तब वह जगा हुआ था, अभी युद्ध के शुरु होने में नौ दिन रह गये थे कि वह सो गया। उसे उठाओ। वह मेरी तरह शापग्रस्त नहीं है। वह वानर सेना और राम-लक्ष्मण का नाश कर सकता है। यदि कुम्भकर्ण उठ गया, तो मेरा भी कुछ ढ़ाढ़स बनेगा। यदि ऐसे समय कुम्भकर्ण मेरी मदद न करे, तो उसका होना और न होना मेरे लिए बराबर है।"

रावण के यह कहते ही, राक्षस कुम्भकर्ण के घर गये। वे अपने साथ चन्दन, फ़ूल और आहार ले गये। एक बड़ी गुफ़ा की तरह बने घर में कुम्भकर्ण सो रहा था। वह इतनी जोर से साँस ले रहा था कि उनके जोर से जो राक्षस अन्दर जाने की कोशिश करते, बाहर धकेल दिये जाते। बहुत कोशिश के बाद वे आखिर गुफ़ा में घुस जाये।

कुम्भकर्ण भयंकर अवस्था में गाढ़ निद्रा में था। उसके सामने तरह तरह के माँस रखे हुए थे। चावलों के ढ़ेर थे। मद्य और रक्त घड़ों में भरा था। राक्षसों ने उसे उठाने का बड़ा प्रयत्न किया। सब मिलकर जोर से चिल्लाये। भयंकर ध्वनियाँ कीं। गदाओं और मूसलों से उसके शरीर पर मारा। कुम्भकर्ण का उठना तो क्या, उसने करवट तक न ली। राक्षसों को गुस्सा आ गया, उन्होंने हाथियों से कुम्भकर्ण को रुँदवाया। तब वह यूँ उठा, मानों कोई कीड़े उसके शरीर पर रेंग रहे हों। उसने उठकर, ज़ोर से अँगड़ायी ली।

कुम्भकर्ण उठा—उसने मांस खाया। मद्य पिया। फिर चारों तरफ राक्षसों को देखकर, उसने उनसे पूछा—"तुम सबने आकर, मुझे क्यों नींद से उठाया है? रावण ठीक हैं न? शायद कोई आपत्ति आ पड़ी है। शायद इसीलिए ही तुम सबने मुझे उठाया है। बताओ, आखिर बात क्या है?"

कुम्भकर्ण जब सोता था, तो कभी-कभी तीन महीने, कभी छः महीने, कभी-कभी नौ महीने भी सोता था।

रावण के मन्त्री धूपाक्ष ने कुम्भकर्ण से कहा—"कुम्भकर्ण, पहिले जितना भय देवताओं के कारण हुआ था, अब इन मानवों के कारण हो रहा है। पहाड़ जितने बड़े वानरों ने लंका को घेरा लिया है। राम ने यह काम सीता को यहाँ लाये जाने के कारण क्रुद्ध होकर किया है। कुछ दिन पहिले यहाँ एक वानर आया और वह लंका को जलाकर, अक्षयकुमार को मारकर चला गया। उस रावण को जिसने देवताओं को भी जीता था, अपमानित करके, जीते जी राम ने छोड़ दिया है। जो काम कोई देवता, पहिले न कर सका था, अब इस राम ने कर दिखाया है। इस पर आपत्ति आ पड़ी है।"
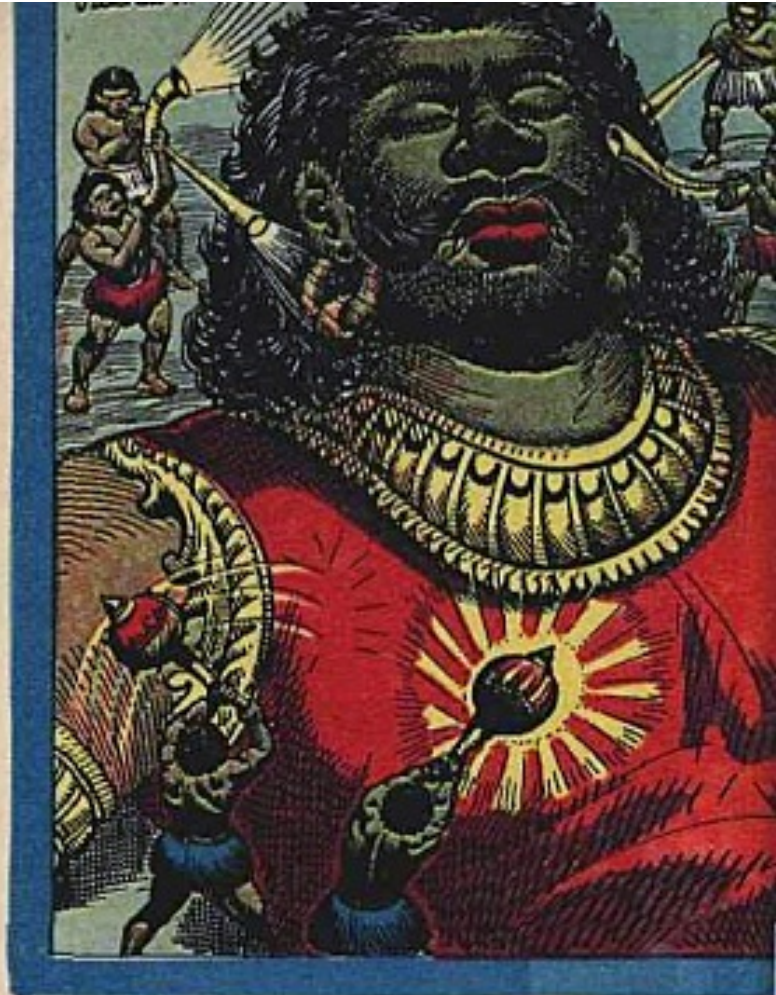
अपने भाई के अपमान की बात सुनकर, कुम्भकर्ण गुस्से में अंगारे उगलते-उगलते कहने लगा—"मैं पहिले इस वानर सेना और राम लक्ष्मण को मारकर, फिर रावण से मिलूँगा। मैं राम लक्ष्मण का खून पीऊँगा और राक्षसों को वानरों का खून पिलाऊँगा।"

महोदर नाम के राक्षस प्रमुख ने कुम्भकर्ण के सामने हाथ जोड़कर कहा—"कुम्भकर्ण, पहिले तुम रावण के पास

चलो। उनके साथ सोच विचारकर, फिर शत्रुओं पर युद्ध करने गये, तो विजय पाने की अधिक आशा है।"

कुम्भकर्ण इसके लिए मान गया। सब राक्षसों को साथ लेकर, वह रावण के घर जाने के लिए तैयार हो गया।

राक्षसों ने जाकर, पहिले रावण की दर्शन किये। "आपके भाई कुम्भकर्ण को हमने उठा दिया है। क्या आज्ञा है? क्या वे सीधे युद्ध के लिए चले जायें या यहाँ आयें?"

रावण को यह जानकर खुशी हुई कि कुम्भकर्ण उठ गया था। "उसे सादर यहाँ लिवा आओ।" उसने राक्षसों से कहा।

महोदर ने कुम्भकर्ण के पास जाकर कहा कि रावण उसे बुला रहा था।

कुम्भकर्ण रावण के घर की ओर निकला। ज्यों ज्यों वह एक एक कदम आगे रखता, त्यों त्यों भूमि काँप उठती। रास्ते में जो राक्षस देखता, उसको नमस्कार करता। लंका के बाहर वानर उसे देखकर घबरा उठे। कुछ भाग भी गये।

राम ने कुम्भकर्ण को देखकर, विभीषण से पूछा—"लंका में पर्वत के आकार का, मुकुट पहिने जो चला जा रहा है, वह कौन है? उसे देखकर, अपने वानर भागे जा रहे हैं।"

"वह कुम्भकर्ण है। युद्ध में उसने इन्द्र और यम को भी जीता था। राक्षसों में उतने बड़े शरीरवाला और कोई नहीं है। उसका बल स्वाभाविक है। वरों द्वारा संग्रहीत नहीं है।" विभीषण ने कहा।

पृथ्वी सम्राट
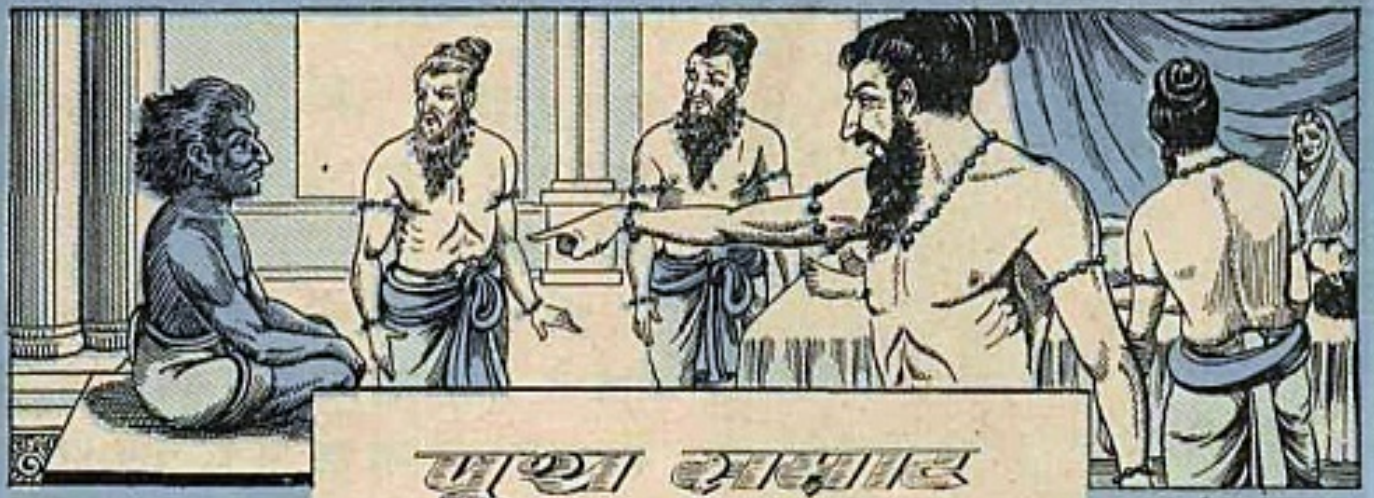
जब मुनि जान गये कि वेनु दुष्टता न छोड़ेगा, तो वे उसे मारकर चले गये। उसके बाद वेनु की माँ सुनिधि अपने लड़के के लिए दुःखी हो उठी। वह उसकी लाश को सुरक्षित रखने लगी।

वेनु को मारकर, मुनियों ने सरस्वती नदी में स्नान किया। हवन किया। नदी के किनारे सब कथा गोष्टी में समय बिता रहे थे कि एक दिन कई उत्पात हुए। राजा नहीं था, इसलिए चोर, डाकू लोगों को लूटने लगे। हत्यायें होने लगीं। अराजकता पैदा हो गयी।

इस स्थिति का कारण, क्योंकि मुनि ही थे, इसलिए उन्होंने उसका परिष्कार करना चाहा। वे यह भी न चाहते थे, अंग देश वेनु के साथ समाप्त हो जाये। वे यह भी जानते थे कि सुनिधि, वेनु की लाश की रक्षा कर रही थी। मुनि सुनिधि के पास गये, वेनु की लाश की जाँघ को मथा।

इस कारण वेनु की जाँघ में से एक विचित्र पुरुष पैदा हुआ। उसके शरीर का रंग, कौव्वे जैसे काला था, ठिगना था। छोटे छोटे हाथ और छोटे छोटे पैर थे। उसकी आँखें और बाल लाल लाल थे। उसका नाम बाहुक था।

उसने विनयपूर्वक मुनियों को नमस्कार करके, पूछा—"मैं क्या करूँ?"

मुनियों ने उससे कहा—"निशीद।"

"निशीद" का अर्थ "बैठो" है, चूँकि उसे "निशीद" कहा गया था, इसलिए उसका नाम निषाद भी पड़ा।

अन्तिम पृष्ठ

उसकी सन्ततिवाले पहाड़ों और जंगलों में रहने लगे।

बाहुक के साथ वेनु के शरीर का कल्मष सब बाहर आ गया। तब मुनियों ने वेनु के हाथों का मथा। उसमें से एक पुरुष और एक स्त्री पैदा हुए। वे दोनों देवीय मालूम होते थे।

मुनियों ने पुरुष का नाम पृथ रखा। उसके दायें हाथ में चक्र और पैर में कमल था। मुनियों ने पृथ को राजा के रूप में अभिषेक किया। उस राज्याभिषेक पर सब देवताओं ने उपहार दिये। उसने राजचिन्ह और अलंकार पहिनकर, अपने साथ पैदा हुई अर्चिस को अपनी पत्नी बनाया।

पृथ राजा तो हो गया था, पर इतने मात्र से प्रजा के कष्ट नहीं गये। वे भूख के कारण मरे जा रहे थे। भूमि पर अन्न न था। पृथ ने भूमि पर क्रुद्ध होकर, धनुष पर बाण चढ़ाकर, उसे मारना चाहा। भूदेवी डर गई। गौ का रूप धारण करके भागने लगी। पृथ उसके पीछे भागा।

"मुझे क्यों मारना चाहते हो? क्या स्त्री की हत्या की जा सकती है?" गौ रूप में भूदेवी ने पृथ से पूछा।

"ब्रह्मा ने जो औषधियाँ दी थीं, उन सबको तुमने गायब कर दिया। प्रजा के लिए धान आदि भी न छोड़ा—तुम को मारने में कोई पाप नहीं है।" पृथ ने कहा।

"मुझे मारकर, तुम और तुम्हारी प्रजा कैसी जी सकेगी?" भूदेवी ने पूछा।

"मैं तुम्हारी चरबी को उन लोगों को खिलाऊँगा, जो भूख से मर रहे हैं। तुम्हारा माँस खाकर लोग जीयेंगे।" पृथ ने कहा।

"राजा, गुस्सा न करो, जो मैं कहूँ उसे ध्यान से सुनो। जब राजाओं ने ठीक मेरा परिपालन न किया, जब चोरों के कारण अराजकता पैदा हो गई, तो ब्रह्मा की बनायी हुई औषधियों को मैं निगल गई। अब वे हजम भी हो गई हैं। जिस प्रकार मधु मक्खियाँ फूलों से मधु निकालती हैं, उसी प्रकार बुद्धिमान किसी भी चीज़ से सार निकाल सकता है। बुद्धिमानों ने ऐसी कई बातें पहिले ही मालूम कर ली हैं। यदि एक बछड़े और एक पात्र और एक दुहनेवाले को लाये तो औषधियाँ जो मैं निगल गई थी, उसका सार एक ही साथ दे दूँगी। मुझ पर ठीक तरह हल चलाओ, वर्षा के न होने पर तालाब वगैरह ठीक कर लो। मैं तुम्हारी प्रजा को, जितना अन्न चाहोगे उतना दूँगी।" भूदेवी ने समझाते हुए कहा।

यह सुन पृथ सन्तुष्ट हुआ। वह मनु को बछड़ा बनाकर और स्वयं दुहने लगा।

उसकी इच्छा पूरी हुई। गौ के दूध से प्रजा सन्तुष्ट हुई।

फिर पृथ ने सारी भूमि पर ठीक तरह हल चलवाया। खेती शुरु की। गाँव नगर
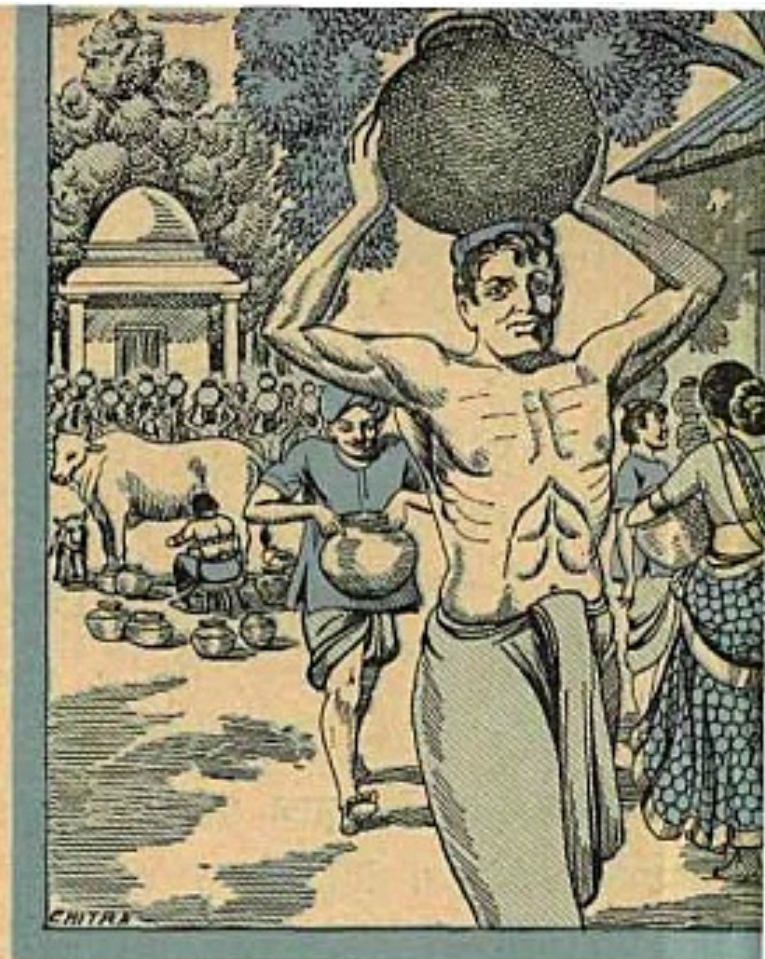
आदि, बसाकर उसने प्रजा के नियमित जीवन की व्यवस्था की।

फिर पृथ सम्राट ने ब्रह्मावर्त नामक मनुक्षेत्र में अश्वमेध करने की इच्छा से निन्यानवे अश्वमेध यज्ञ करवाये।

इन्द्र को यह पसन्द न आया। जो सौ यज्ञ करवा लेते हैं उनको इन्द्रत्व मिलता है। इसलिए ही इन्द्र का नाम शतमुखी है।

पृथ जब सौवाँ अश्वमेध करवाने की सोच रहा था, तब इन्द्र को डर लगा कि उसका पद चला जायेगा। वह यज्ञ के अश्व को चुराकर ले जाने लगा।

यह बात अत्रि महामुनि को मालूम हुई। पृथ के लड़के को बुलाकर उसने कहा—"इन्द्र यज्ञ के अश्व को चुराकर ले जा रहा है, देखो।"

धनुष बाण लेकर जब उस लड़के ने पीछा किया, तो इन्द्र घोड़े को छोड़कर अदृश्य हो गया।

जो पुत्र घोड़े को पुनः जीतकर लाया था, उसका नाम विजिताश्व पड़ा। परन्तु इन्द्र ने अश्वमेध न होने दिया। वह फिर यज्ञ के अश्व को चुरा ले गया। पृथ को बड़ा गुस्सा आया। वह इन्द्र को मारने के लिए निकला।

तब ब्रह्मा प्रत्यक्ष हुआ। "तुम इन्द्र को क्यों मार रहे हो? यदि तुमने यज्ञ किया, जो देवता उसमें आयेंगे वे इन्हीं के ही तो आधीन हैं? निन्यानवे यज्ञ किये हैं ये काफ़ी हैं। अब ये सौवाँ यज्ञ न करो।" कहकर उसने इन्द्र और पृथ में सन्धि करवायी।

फिर पृथ यज्ञशाला से नगर आया। उसने बहुत समय तक राज्य किया। उसके राज्य में प्रजा को सुख-सन्तोष मिला। वह यद्यपि गंगा और यमुना के बीच भाग में रहा करता था, परन्तु उसने सप्त द्वीपों का पालन किया। उसने ऐसे विधान बनाये जो प्रजा के हित में थे। अन्तिम दशा में, वार्धक्य में उसने राज्य को अपने लड़कों को दे दिया और अपनी पत्नी के साथ वन में वानप्रस्थी होकर रहने लगा।

पृथ के बाद विजिताश्व सम्राट बना। उसने अपने भाइयों को तीन दिशाओं में राज्य दे दिया और स्वयं सम्राट होकर राज्य किया।

३७. चन्द्र पर्वत

इनको अफ्रीकी "रुवेंजोरी" (वर्षाकारक) कहते हैं। इन पहाड़ों में कोई नहीं रहता। हमेशा बादल और कोहरा छाये रहते हैं। पेड़ों पर से पानी टपकता रहता है। सर्वत्र नीरवता रहती है।

यहाँ मामूली पेड़ भी बहुत बड़े हो जाते हैं। इसका कारण नहीं मालूम है। ज़मीन पर काई जमी रहती है। फ़ुहार पड़ती रहती है। उनमें कीड़े भी होते हैं। यहाँ आने पर लगता है, जैसे किसी दूसरे लोक में आ गये हों।

ये पर्वत भूमध्य रेखा पर, बुगान्डा और कान्गों की सीमाओं पर है। ६० मील लम्बा, ३० मील चौड़े इस प्रान्त में हमेशा पहाड़ों की चोटी पर बर्फ रहती है। ग्लेशियर भी हैं। चोटियों की ऊँचाई करीब करीब १६,००० फीट हैं।

इस प्रकार के पर्वत, संसार में शायद अन्यत्र कहीं नहीं है। इसलिए इनकी विशेषता कदाचित और भी बढ़ जाती है।

इन पर्वतों में मनुष्यों को हानि पहुँचानेवाले जानवर—हाथी, चीते वगैरह हैं। उनमें कई विचित्र प्राणी है। वे और कहीं नहीं होते। उनमें एक "पहाड़ी खरगोश" है। यह देखने में खरगोश मालूम होता है, पर वस्तुत: है नहीं। यह प्राचीन हाथियों और गेंडों की जाति का है। यह जोर से चिल्लाता भी है। यहाँ एक और विचित्र प्राणी होता है, जिसके माथे पर तीन सींग होते हैं। [चित्र देखिये]

Photo by Prasad

पुरस्कृत परिचयोक्ति

क्यों चुप हो, कुछ बोलो!

प्रेषिका :
कु. मंजु अग्रवाल - इलाहाबाद

Photo by Prasad

पुरस्कृत परिचयोक्ति

हँसो, हँसाओ, मुँह खोलो!!

प्रेषिका : कु. मंजु अग्रवाल - इलाहाबाद

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

मार्च १९६५ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें!

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ जनवरी १९६५ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

जनवरी – प्रतियोगिता – फल

जनवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **क्यों चुप हो, कुछ बोलो!**

दूसरा फ़ोटो: **हँसो, हँसाओ, मुँह खोलो!!**

प्रेषिका: **कुमारी मंजु अग्रवाल**

C/o. श्री महेशचंद्र, ३७८/१६३ मम्फोर्डगंज, इलाहाबाद - २ (यू. पी.)

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

यह लीजिये ब्रिटेनिया के दो शोख रंग-बिरंगे डिब्बे 'रोजेज़' और 'बुके' जो ब्रिटेनिया के चुने हुए तरह-तरह के स्वादिष्ट बिस्कुटों से भरपूर हैं। ये दिलकश डिब्बे किसी भी अवसर पर उपहार देने के लायक हैं और जब खाली हो जायें तो सामान रखने के लिये लाजवाब हैं।

ब्रिटेनिया
बिस्कुट

अब परदेश में भी प्रसिद्ध